Chapter-6

अध्याय षष्ठ

आधुनिक दोहा छंद का सौन्दर्यवादी अभिगम

सौन्दर्यवादी अभिगम

काव्य में सौन्दर्य की संनिहित ही उसकी अर्थवत्ता को स्थापित करती है। अर्थात काव्य के दो महत्वपूर्ण पक्ष हैं भाव और कला। इनकी अभिनवता और चारुता इस सौन्दर्यवादी अभिगम को कविता के माध्यम से अभिव्यंजित करती है। सौन्दर्य कविता का विशेषण है। अन्यान्य वस्तु परक संज्ञाओं में विशेषण की संनिहित मूल शब्द से पहले प्रयुक्त होती है जैसे शरद ऋतु, ग्रीष्मावकाश, सज्जन,पुरुष, दुर्बुद्धि आदि शब्दों में विशेषण का प्रयोग मूल शब्द से पहले है किन्तु काव्य सौन्दर्य या कला सौष्ठव में यह विशेषण का प्रभाव अनुगामी होकर दूसरी पंक्ति का है। कहने का तात्पर्य यह है कि काव्य कला या कला अधिक प्रभावक तथा अहम् है जबकि सौन्दर्य तथा सौष्ठव शब्द उस कला के प्रभाव को अभिवर्धित करते हैं। व्यक्ति जब काव्य में एक विशिष्ट आनंद की अनुभूति करता है। तो वह आनंदानुभूति का कारण उस काव्य की रमणीयता या सौन्दर्य पर ही आधारित होती है। संस्कृत आचार्यो ने ''वाक्यं रसात्मकम् काव्यम्'' कह कर काव्य सौन्दर्य को रस में समाहित करके प्रसारित किया है। वस्तुतः यह रस विषयक विशेषण ही काव्य के सौन्दर्यवादी अभिगम को व्यक्त करता है। आचार्य भरत मुनि से लेकर, आचार्य मम्मट अप्पय दीक्षित, रुद्रट, शंकुक, लोल्लट, अभिनव गुप्त वामन, दण्डी, विश्वनाथ, जगन्नाथ आदि अनेक विद्वानों ने काव्य में रस की संनिहिति के संदर्भ में तथा काव्य सौन्दर्य की अभिवृद्धि के संदर्भ में विस्तार से रस चर्चायें की हैं।

''भारतीय साहित्य में सौन्दर्य शब्द का प्रयोग बहुत प्राचीन नहीं है। साहित्य के आदिचरण वेदों, उपनिषदों में सौन्दर्य शब्द नहीं मिलता है। किन्तु इसी भाव से व्यंजक या इसी अवधारणा

को परस्तुत करने वाले शब्द अवश्य मिलते हैं। सौन्दर्य मिमांशा की झलक ऋग्वेद के नवम् मण्डल में मिलती है । किन्तु यहाँ पर सौन्दर्य की दृष्टि कलावादी नहीं है। वह सौन्दर्य को इन्द्रिय ग्राह्य मानते थे यहाँ पर सौन्दर्य के अध्यात्मिक तत्व पर बल मिलता है।''(1)

संस्कृत के आचार्यो ने काव्य में रस की संनिहिति को सौन्दर्य से जोड़ा है तो हिन्दी के आचार्यो ने काव्य में शिवम् की प्रतिष्ठा को सौन्दर्य का परिवर्धक माना है आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने काव्य में सौन्दर्य की संनिहिति को बहुत ही महत्वपूर्ण रेखांकित किया है। उन्होंने धार्मिक आस्था में संलग्न शिवम् को ही काव्य का सौन्दर्य स्वीकार किया है। उनके अनुसार काव्य का सौन्दर्य केवल अलंकार, रस, छंद आदि वाह्य उपकरणों तक ही सीमित नहीं है। बल्कि वह सौन्दर्य मन वचन और व कर्म में भी व्याप्त है। क्यों कि जहाँ मत का भावात्मक आनंद काव्य का सौन्दर्य है। वहीं कर्म का सौन्दर्य अन्ततोगत्वा शिवम् में परिवर्तित हो जाता है।

''सौन्दर्य शास्त्र में सौन्दर्य की दार्शनिक व्याख्या मिलती है सौन्दर्य रुपाश्रित है। सृष्टि में रूप के बिना सौन्दर्य की अभिव्यक्ति संभव नहीं है। वस्तुतः सौन्दर्य की स्थिति मानव-मन की कल्पना में होती है। भौतिक दृष्टि के सौन्दर्य को या तो अपूर्ण माना है या अस्वीकार किया है। किन्तु इसके विपरीत कुछ सीमित सौन्दर्य शास्त्रियों ने इसे स्वीकार किया है। सृष्टि के सौन्दर्य का दर्शन होता है तो वह सौन्दर्य शास्त्रीय बोध या संस्कारों के आधार पर होता है। इस प्रकार वे यह मानते हैं कि मानवीय कल्पना से निरपेक्ष सृष्टि में सौन्दर्य का अस्तित्व है ही नहीं।''(2)

मध्यकालीन हिन्दी कवियों ने सौन्दर्य को दो मुख्य अविधाराओं में वर्गीकृत किया है। एक है स्थूल मांसल सौन्दर्य तथा दूसरी है दर्शन सम्बंधी वैचारिक सौन्दर्य। भक्तिकालीन कवियों ने जहाँ दर्शन सम्बंधी अध्यात्मिक सौन्दर्य को रागात्मक उत्कर्ष प्रदान किया है। वहीं रीतिकालीन आचार्यो ने भौतिक दृष्टि से समन्वित मांसल श्रृंगार के सौन्दर्य में ही अपनी आस्था व्यक्त की है। इस तरह रीतिकालीन लौकिक सौन्दर्य के स्थान पर भक्ति कालीन अलौकिक सौन्दर्य काव्य में समन्वित होता रहा है।

आधुनिक काल में यह दोनों ही प्रभावान्वित काव्य में साथ-साथ सतत अग्रसर रही है। यदि आधुनिक काव्य का प्रारम्भ भारतेन्दु युग से माने तो बाबू भारतेन्दु हरिश्चंद्र स्वयं इस उभय समनविति के समर्थक संघर्षों से साक्षात्कार करते हुए कहते हैं - ''हाँ भारत दुर्दशा देखी न जायी'' तो दूसरी ओर वे यह भी कहते हैं -

सरबस रसिक के सुदास दास प्रेमिन के।
सखा प्यारे कृष्ण के गुलाम राधा रानी के॥

वैसे इस रहस्यपूर्ण असंगति का सायास प्रयोग मध्य काल में भी हुआ है। जहाँ-कवियों ने जानबूझकर मांसल श्रृंगार वर्णन में इस प्रकार की अलौकिक सुखानुभूति को एक अलग ही काव्यानंदित सौन्दर्य को स्वीकारा है। वहाँ उनकी अभिप्रित कथ्य के स्थूल विषय से ही है जैसे चंद कवि कहते हैं -

कवि चंद जू चैत की चाँदनी में,
चित दंपति कौ रति रंग बनौ रहै।
राधाकृष्ण जू रावरे राज में
बारहु मास बसंत बनौ रहै।।

सतही और स्थूल मांसल वर्णन की काव्य भंगिमाएं छायावाद तक आते-आते तिरोहित हो चुकीं थीं क्योंकि सौन्दर्यानुभूति का अर्थ है। कलागत सौन्दर्य का भावन अथवा मनन यह एक संकुल प्रक्रिया है, विषय के संनिकर्ष में होने वाला केवल संवेदन नहीं है। संवेदन एक एन्द्रिय बोध है जो सर्वथा अव्यवस्थित होता है किन्तु सौन्दर्यानुभूति एक एन्द्रिय मानसिक अनुभूति है। छायावाद में काव्य के सौन्दर्य को मानसी अनुभूतियों का विषय बना दिया गया क्योंकि काव्य का सौन्दर्य किसी निश्चित देशकाल की सीमा में आवद्ध नहीं रहता वह प्रवृत्ति में भी है। और पुरुष मे भी वह सौन्दर्य जड़ में भी है और चेतन में भी ग्राम्य वासियों और अरण्यवासियों की मानसिक संवेद्य अनुभूतियों में कही भी। कोई अन्तर नहीं होता । अवसादों के और शौख्य के अनुभवन सभी जगह एक से होते हैं। इसी दृष्टि के तहद छायावादी कवियों ने व्यक्ति शोच में समष्ठि सोच को संनिहित करके एक ऐसे सौन्दर्य की उद्‌भावनाकी जो सामान्य लोक में स्वीकार्य हुआ।

जहाँ एक ओर प्रसाद ने दार्शनिक स्वरों में लोकोत्तर भाव भूमि के सौन्दर्य की चर्चा की है वहीं दूसरी ओर सुमित्रा नंदन पंत प्रकृति के माध्यम से जड़ में चैतन्य का आरोपण करते हुए सौन्दर्यवादी अभिगम को प्रस्तुत करते हैं। निराला जहाँ एक ओर अपनी बेटी सरोज की स्मृतियों के अवसाद मे डूबकर काव्य के कारुणिक सौन्दर्य को अभिवृद्धि करते हैं तो वही वे इलाहाबाद के पथ पर तोडती पत्थर या भिखारी जैसी कविताओं के माध्यम से भौतिक संत्रास की व्याख्या करते हुए संवेदनाओं के विविध स्तर पर अभिव्यक्त सौन्दर्य को उजागर करते हैं।

छायावाद के कवियों की अति रंजना ने उन्हे वायुवी परिकल्पनाओं से भावजीवी घोषित करके नकार दिया था। इसकी परिवर्ती काव्य धारा में रहस्यवाद से आगे प्रयोगवादी कविता इतनी स्थूल और विचार जीवी हो गई कि उसमें सौन्दर्य चेतना जैसे संवेदनात्मक अभिव्यक्ति का अभाव खुलने लगा इससे आगे के दौर में अकविता नई कविता, नवगीत तथा समकालीन कविता का दौर

सामने आया जिनमें अभिजात्य वर्गीय अभिरुचियाँ ही केन्द्रस्थ रहीं। हाँ नवगीत में अवश्य ही भारतीय सांस्कृतिक संचेतना के स्वर सुनाई दिये जिनमें कविता का एक सहज सौन्दर्य सामने आता है। रोहिताश्व 'समकालीन कविता और सौन्दर्य बोध'' में स्पष्ट कहते हैं **''समकालीन कविता की पूर्व-भूमिका में अर्थात नयी कविता के दौर में जो अभिजात्य वर्गीय अभिरूचियाँ, अपने जडीभूत सौन्दर्याभिरुचि रुप में सक्रिय थी उनका निषेध अकविता के दौर में स्वयं निषेधवादी नकारात्मक प्रवृत्तियों की सृजना ने किया था। अकविता दौर के चर्चित कवि सौमित्र मोहन ने स्वयं स्वीकारा है कि नयी कविता के दिनों रूमानियत कवियों में हावी थी ।''**(3)

अकवियों ने अपनी निषेधात्मक उक्तियों के द्वारा एक नया प्रभाव मण्डल स्थापित किया किन्तु वह सौन्दर्याभिमुख नहीं था। धर्मवीर भारती, कुंवर नारायण, जगदीश गुप्त, विजयदेव नारायण 'शाही', आदि कवियों ने पुराणों, उपनिषदों को आधार बनाकर जो मिथकीय काव्य रचे उनमें एक सांस्कृतिक सौन्दर्य अवश्य विद्यमान था। जगदीश गुप्त की काव्यकृति ''युग्म'', दिनकर की ''उर्वशी'' धर्मवीर भारती की ''कनुप्रिया'', आदि रचनाएं भोग लिप्सा की मिथकीय भूमिका में लिखी गईं थीं जिनमें उनका नैसर्गिक सौन्दर्य विद्यमान था।

वस्तुतः यह सौन्दर्य बोध कविता या नई कविता की उस नकारात्मक दुर्गंध के खिलाफ था। जहाँ कवियों ने कविता की संवेदना को एक धृणित परिद्रश्य में बदल दिया था। विशेष करके अकविता के आन्दोलन में कविता को अधिक विकृति प्रदान की है। उन्होंने नारी की सौन्दर्यवान छवि को एक धृणित आकार देते हुए दो-तीन गर्भपात के बाद धर्मशाला बना दिया **उसे वासना के दुर्गधमय प्रमोष्ठों में ले जाकर खड़ा कर दिया। ये अकवि जगह-जगह नाडा खोलकर मूतने, मोजे से अपना चेहरा पोछने, वीर्य और मवाद से सनी लुंगी में हिन्दुस्तान का नक्सा बनाने की फूहड़, विभत्स, ढ़ीठ और दुस्साहसिक हर्कतों पर आमादा हो गये थे। यहाँ कविता के सौन्दर्य बोधत्व का परम् ह्रास हुआ।**(4)

सम्भवतः अकविता के इसी कुशित वर्ण्य से ऊभकर और भागकर हिन्दी में नवगीत का पदार्पण हुआ। नवगीत में प्रमुख रुप से समाज के प्रत्येक वर्ग की दिनचर्या को सांस्कृतिक परिवेश में व्यक्त किया गया जिसमें एक सहज सौन्दर्य समाविष्ट था। नवगीत के साथ-साथ हिन्दी में दो अन्य काव्य-विद्याओं का भी प्रसार जोर-शोर से हुआ। जिनमें एक है गज़ल और दूसरा है दोहा छन्द।

विवेच्य विषय दोहा छन्द के सम्पूर्ण वृत्त का यदि अध्ययन किया जाय तो वह उर्दू गज़ल के शेर को चुनौती देनेवाला छन्द है। लघुवृत्तीय छन्द अपने कलेवर में कथ्य को सम्पूर्णता को

समाहित किये हुए अपनी अभिनवता प्रदर्शित करता है। भारत वर्ष में अरबी और फारसी की ग़ज़लों का चलन मुगल साम्राज्य के समय से प्रचलित है और वह भी भारतीय भाषाओं के अनुरुप न होकर अथवा यूँ कहिए कि उनकी शब्दावलियाँ इतनी अधिक अरबी एवं फारसी भाषा से निस्सृत थी कि भारतीय हिन्दी समाज उन्हे सहजता से ग्रहण नहीं कर पा रहा था और वे मुगल दरबारों की या मजिलेशों की शोभा और वाह-वाह बनकर रह गई थी।

बाद में अरबी फारसी गजलों के भारतीकरण का रुप उर्दू गजलों के रुप में प्रस्तुत हुआ। इस उर्दू भाषा में शब्दावलियाँ तो अरबी-भारसी की थी किन्तु वाक्य रचना तथा सम्पूर्ण व्याकरण हिन्दी का ही था ये उर्दू गजलें धीरे-धीरे जन सामान्य की अभिरुचि में समाहित होने लगीं और इन गजलों के ही कुछ लोकप्रिय शेर लोक में जनप्रिय हो गये। दोहों की तरह ही शेर भी लघुवृत्तीय तथा सम्पूर्ण कथ्य को समाहित करनेवाला लोकाग्रही छंद है। इस शेर के सभी गुण दोहा में विद्यमान हैं। एक खास अन्तर यह है कि दोहा छन्द अपनी छान्दश संरचना में एक ही रुप में स्थित है जिसमें तेरह-ग्यारह की यति के दो चरण होते हैं और अन्त में लघु गुरु की व्यवस्था होती है। किन्तु शेर छन्द का अनुबंधन एक जैसा नहीं है वह ग़ज़ल के वहर के अनुपात में लघु या दीर्घ वृत्तीय होता है।

आधुनिक युग वैज्ञानिक तकनिकी के चरम विकास का युग है। कम्प्यूटर एवं इलेक्ट्रोनिक प्रसाधनो की अत्यन्त विकसित सुविधाओं ने जन सामान्य के आगे दर्शनीय तथा चिन्तनीय विषयो के अनन्त विस्तार सामने आये हैं। अब उसके सामने ज्ञान के असंख्य श्रोत उपस्थित हैं। इन्टरनेट की सुविधाओं ने व्यक्ति को थोडे समय में बहुत कुछ जानने की सुविधा प्रदान की है। इस वैज्ञानिक सुविधा ने व्यक्ति की मानसिकता को भी परिवर्तित किया है। अब उसके पास किसी एक ही कला के आस्वादन के लिए बहुत समय नहीं है। जैसे ! काव्य रसिकों के सामने अब बडे-बडे ग्रन्थ, मोटे-मोटे उपन्यास, हजार आठ सौ पृष्ठों के महाकाव्य या विशाल खण्ड काव्य सम्पूर्ण रुप से पढ़ने का समय नहीं है। वह अपनी इन अभिजात्य अभिरुचियों को थोडे समय में पूरा करना चाहता है। यहाँ तक कि लम्बी कविताओं के आकर्षण का भी मोह भंग हो चुका है ऐसी स्थिति में उसका ध्यान इस लघुवृत्तिय दोहा छंद पर आता है। जो शताब्दियों से इस देश के वातावरण में पुष्पित व पल्लवित होता रहा है। अपभ्रंश, प्राकृत, पालि से लेकर आदि काल और सम्पूर्ण मध्यकाल से होता हुआ यह दोहा छंद अपने वैविध्यपूर्ण स्वरुप के कारण आज भी आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है।

आधुनिक काल में कविता में एक बडा वैचारिक बदलाव नयी कविता या आधुनिक कविता में आया। इसी अकविता की गूढ वैचारिकी को सहज एवं रागात्मक ढंग से नवगीतों में तथा ग़ज़लों में प्रस्तुत किया गया है। और यही सामयिक बोध दोहा काव्य ने अपनाया। धीरे-धीरे दोहा छंद की लोकप्रियता पुनर्स्थापित होने लगी और वर्तमान पत्र-पत्रिकाओं में यह दोहा छंद अधिकांशतः अनिवार्य रुप से उजागर होता गया। आज देश के सताधिक वरिष्ठ दोहाकार हैं जिनके संग्रह या संकलन स्वतंत्र रुप से मुद्रित हुए हैं अथवा सम्पादित रुप में उनका दोहा साहित्य सामने आया है।

आधुनिक दोहाकारों में अत्यंत लोकप्रिय, वरिष्ठ तथा सिद्धहस्त दोहाकारों में कुछ प्रमुख नाम इस प्रकार हैं - देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक', अनन्तराम मिश्र, पाल भसीन, भारतेन्दु मिश्र, महेश दिवाकर, यश मालवीय, सूर्यभानु गुप्त, कुमार रवीन्द्र, कुँअर बेचैन, राजेन्द्र गौतम, रामानुज त्रिपाठी, ब्रजकिशोर वर्मा, उर्मिलेश, श्रीकृष्ण शर्मा, कृष्णेश्वर डींगर, माहेश्वर तिवारी, आचार्य भगवत दुबे, कैलाश गौतम, वेदप्रकाश पाण्डेय, रामनिवास मानव, शैल रस्तोगी, हस्तीमल हस्ती, राम सनेही लाल शर्मा, रामबाबू रस्तोगी, दिनेश शुक्ल, राधेश्याम शुक्ल, हरेराम समीप, शिवकुमार पराग, शिवशरण दुबे, राजेन्द्र वर्मा, किशोर काबरा, चन्द्रपाल शर्मा, हरीश निगम, जहीर कुरेशी, निदा फाजली, ओम वर्मा, अशोक अंजुम, कोमल शास्त्री, रामेश्वर हरिद, महा श्वेता चतुर्वेदी, दिनेश रस्तोगी, सुबोध चन्द्र शर्मा, जय चक्रवर्ती, आचार्य बलदेव राज शांत, राधेश्याम शुक्ल, शिव ओम कुमार अम्बर, चन्द्रसेन विराट, विष्णु विराट, जयकुमार रुसवा, नरेन्द्र श्रीवास्तव, डॉ. माता प्रसाद आदि।

इन तमाम दोहाकारों के परिमाण को देखते हुए दोहा छंद की लोकप्रियता पर कोई संदेह नहीं रह जाता। देश की अधिकांश पत्र-पत्रिकाओं में इन दोहाकारों के दोहे छपते रहे हैं। कुछ प्रमुख दोहा संकलन जो सामने आये हैं उनमें प्रमुख हैं -

	पुस्तक	दोहाकार
-	नूतन दोहावली	सुबोध चन्द्र शर्मा 'नूतन'
-	बढने दो आकाश	डॉ. वेदप्रकाश पाण्डेय
-	नावक के तीर	डॉ. अनन्त राम मिश्र 'अनन्त'
-	हम जंगल के फूल	ब्रज किशोर वर्मा 'शैदी'
-	तुज़ुक हज़ारा	विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक'
-	उग आयी फिर दूब	डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त'

-	एक बादल मन	राधे श्याम शुक्ल
-	का लाय तस्मै नमः	डॉ. भारतेन्दु मिश्र
-	चुटकी भर चाँदनी	राजेन्द्र वर्मा
-	धूप बहुत कम छाँव	डॉ. गोपाल बाबू शर्मा
-	शब्दों के संवाद	आचार्य भगवत दुबे
-	शब्द विहंग	आचार्य भगवत दुबे
-	ढाई आखर	डॉ. हबीब 'हुबाव'
-	सारांश	रामेश्वर हरिद
-	बोलो मेरे राम	रामनिवास 'मानव'
-	जैसे	हरे राम 'समीप'
-	खूंटी लटकी धूप	अश्विनी कुमार पाण्डेय
-	प्रतिबिम्ब	कोमल शास्त्री
-	कबीरा	जीवन मेहता
-	देश बड़ा बेहाल	शिवकुमार पराग
-	विविधा	डॉ. महेश दिवाकर
-	युवको! सोचो!	डॉ. महेश दिवाकर
-	बजे नगाड़े काल के	आचार्य भगवत दुबे
-	शिवशरण सहस्त्रसई	शिवशरण दुबे
-	सहमी-सहमी आग	रामनिवास 'मानव'
-	आँखों खिले पलाश	डॉ. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र'
-	अमलतास की छाँव	डॉ. पाल भसीन
-	पानी की बैसाखियाँ	श्री दिनेश शुक्ल
-	रंग रंग के स्वर	विभाकर आदित्य शर्मा
-	हर सिंगार के फूल	बाबूराम शुक्ल
-	विवेक दोहावली	श्री नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'
-	कोने खुली किताब	डॉ. शैल रस्तोगी

साथ ही देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' द्वारा संपादित सप्तपदी-1, 2, 3, 4,5, 6, 7 की शृंखला है जिसमें दोहा छंद के सशक्त हस्ताक्षरों के दोहों को संकलित किया गया है। इसी प्रकार अशोक 'अंजुम' द्वारा सम्पादित 'दोहा दशक' की एक से दस दोहा संग्रहों की श्रृंखला भी उल्लेखनीय हैं

जिसमें अनेक दोहाकारों के दोहे संकलित हैं।

सबसे अधिक ध्यातव्य बात यह है कि दोहा छंद का अनुशासित काव्य रुप सुरक्षित रहा है। तेरह ग्यारह की यति वाले इस द्विचरणीय दोहे के आकार में न तो कहीं पर भी परिवर्तन की सम्भावना है और न ही इस छंद की अस्मिता से कोई समझौता किया जा सकता है। कुछ एक कवियों ने दोहा और चौपाई छंद को मिलाकर कुछ नये प्रयोग करने की चेष्टा की है तो साहित्य रसिकों ने उन्हे नकार दिया है।

कुछ नवोदित कवियों ने नाधिकार एवं अशुद्ध दोहा छंद का प्रयोग किया है जो सर्वत्र अग्राहयीय रहे हैं। कुछ कवि ऐसे भी हुए हैं जिनके दोहा संग्रह तो प्रकाशित नहीं हुए किन्तु फिर भी उनके लिखे हुए दोहे चर्चा के केन्द्र में अवश्य रहे हैं। कृष्ण बिहारी 'नूर', सोम ठाकुर, किशन सरोज, शिव ओम अम्बर, यश मालवीय, हरीश निगम, तारादत्त, डॉ. उर्मिलेश, माहेश्वर तिवारी, कुमार रवीन्द्र, महेश अनंग, कृष्णेश्वर डींगर, आदि अनेक वरिष्ठ दोहाकार हैं जिनके रचे गये दोहे सर्वत्र सम्माननीय हुए हैं।

ये आधुनिक दोहे अपने कलेवर में विषय की विविधता लिये हुए प्रस्तुत हुए हैं। सम्पन्न से निस्पन्न तक, सुखी से दुःखी तक धनवान से निर्धन तक, अर्थात् समाज के हर वर्ग की संवेदनाओं से जुडे हुए हैं। इन दोहों का सर्वोपरि वैशिष्ठ्य यह है कि इनमें बात सलीके से सरसता से तथा सहजता से कही गयी है।

लघुवृत्तीय होने के कारण दोहा छंद में सौन्दर्य का समन्वय कवि की पूर्वाग्रही चेष्टा रही है। जिससे वह इस छंद के कथ्य को अधिक आकर्षक रूप में प्रस्तुत करके श्रोता या पाठक को अधिक सम्मोहित करना चाहता है। इन दोहों में निहित सरसता संलग्न करने का यही आग्रह सौन्दर्यवादी अभिगम के नाम से जाना जाता है।

कविता में सौन्दर्य के अनेक मानदण्ड आचार्यो ने स्थापित किये हैं। जैसे कलागत सौन्दर्य और भावगत सौन्दर्य।

जैसा कि कहा जा चुका है कि दोहा एक लघुवृत्तीय छंद है और सर्जक के सामने बहुत कुछ कहने के लिए बहुत कम अवकाश इसमें होता है। फिर भी सामर्थ्यवान और सक्षम रचनाकार अपनी सौन्दर्यवादी अभिचेतना के साथ व्यंग्यार्थ के सहारे इस छोटे से छंद में बहुत कुछ कहने का सामर्थ्य रखते हैं।

जहाँ तक काव्य में सौन्दर्य का प्रश्न है। वहाँ कहा जा सकता है सत्य, शिव और सौन्दर्य,

भारतीय मनीषा की उदात्त परिकल्पना रही है। काव्य का समग्र सात्विक परिवेश इसे त्रिवेणी के इर्द गिर्द लहलहाता रहता है। काव्य में जहाँ सत्य और शिव कविता की नैतिक आस्थाओं को स्थापित करते हैं वहाँ सुन्दरम् उसकी मनोरम सज्ञा और आकर्षकत्व को स्पष्ट करता है। काव्य में इस सौन्दर्य की स्थापना के लिए ही इस ओर अलंकरण जैसे तत्वों का साहचर्य लिया जाता है।

''भूषन विन न सुहावती कविता वनिता मित्त'' अर्थात नारी और काव्य के सौन्दर्य को परिवर्धित करने के लिए अथवा उस सौन्दर्य को और अधिक उत्कृष्ठता प्रदान करने के लिए अलंकरण जैसे प्रसाधनो की जरूरत महसूस होती रही है।

काव्य में समाहित सौन्दर्य दो प्रकार का होता है। वस्तुगत सौन्दर्य और भावगत सौन्दर्य। वस्तुगत सौन्दर्य में जहाँ एक ओर काव्यांगो के विविध सज्जा उपकरण सामने आते हैं वहीं दूसरी ओर भावगत सौन्दर्य आत्मीय सम्वेदनाओं से संपृक्त होता है। इस सौन्दर्य भाव को अधिक जानने के लिए कविवर केशव और रसखान को उद्घृत किया जा सकता है। केशव जहाँ काव्य की प्रस्तुतिगत बाह्य सज्जा पर ध्यान देते हैं। वहाँ रसखान अन्तर्मन की रसोद्वेगी भावनाओं पर केन्द्रित होकर काव्य के आन्तरिक सौन्दर्य पर केन्द्रियभूत रहते हैं। इसे हम इन शब्दों में भी व्यक्त कर सकते हैं कि सौन्दर्य दैहिक भी है और मनोगत भी सज्जागत भी है और अनुभव परक भी अलंकरण और रस संयोजन में भी इसी तरह के सौन्दर्य का एकान्तराल विद्यमान है।

जहाँ तक दोहा छंद के सौन्दर्यवादी अभिगम की संचेतना का प्रश्न है। वहाँ भी हम इन्ही मापदण्डो को स्वीकार करते हुए तन से मन तक की सज्जा को अनुभव करते हैं।

हिन्दी के आधुनिक दोहाकारों ने अधिकांशतः तो वस्तु परक कथ्य ही प्रस्तुत किये हैं किन्तु जहाँ भी उन्होंने सौन्दर्यानुभूतियों को प्रकट किया है वहाँ वे अन्तस्थ संवेदनाओ से अवश्य जुड़े हैं। श्री विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक' कहते हैं -

उसकी वेणी में लगा, मेरे घर का फूल।(5)
कसक कलेजे में रहा, बनकर तीखा शूल॥

यहाँ अभिव्यंजना के विस्तार में यह तथ्य अभिलक्षित होता है कि मेरी वेणी का फूल जो उसकी देहरी का फूल सुशोभित हो रहाहै। वह मेरे मन में बेचैनी पैदा कर रहा है क्योंकि मैं इस फूल के साथ न रहकर इस फूल से तथा उस नायिका से दोनो से दूर हूँ जब कि नायिका को यह अनुभाष होना चाहिए कि यह फूल मेरे घर की क्यारी का है उसका यह उपेक्षा भाव मेरे मन में शूल की तरह चुभ रहा है। वहाँ फूल की अपनी रमणीयता उसकी सुगंध, सौन्दर्य तथा नायिका के द्वारा उसका सहज स्वीकार्य एक अहम् भूमिका का स्वीकार करता है। वहीं दूसरी ओर फूल

का नायिका के साथ, सम्पर्क स्वयं को उपेक्षित करके उसीके फूल को स्वीकार करना यह बात नायक को पीड़ा देती है। यहाँ शूल और फूल दोनों ही एक डाली पर अंकुरित हैं और अपने-अपने गुण भंग के कारण पृथक पृथक अनुभूतियों से भी जुड़े हैं। किन्तु नायिका के हिस्से मे फूल और नायक के हिस्से में शूल संयोग जन्य ही मिल पाये हैं। काव्य के सौन्दर्य की अभिवृद्धि करता कवि जहाँ फूल के नैसर्गिक सौन्दर्य एवं आकर्षक सुगंध के प्रति अपनी सौन्दर्यवादी दृष्टि उजागर करता है वहीं शूल के प्रति भी एक प्रतिक्रियावादी सौन्दर्यजन्य वसाद की अनुभूतिका भी प्रसारण करता है।

परोक्ष रूप से कवि नारी सौन्दर्य की अभिवृद्धि के लिए फूल के सौन्दर्य की चर्चा करता है तो दूसरी ओर प्रणयजन्य शूल की मीठी चुभन का भी अहसास संवेदना के स्तर पर जगाता है। एक अन्य दोहा में कवि 'बटुक' कहते हैं -

> रवि रथ का आभास पा, उड़ी चतुर्दिक् धूल।
> सान्ध्य-सुन्दरी छींटती, अपने आँगन् फूल॥[6]

यहाँ कवि ने प्रकृति को जीवन्त बनाकर उसकी मानवीकृत अवस्थाओं को काव्यांकित किया है जैसे सूरज के रथ के आगमन का अनुभास करके धरती पर पड़ी चतुर्दिक धूल उडने लगती है और जैसे ही नायिका संध्या सुन्दरी को आभास होता है कि नायक सूर्य का रथ उसी के रंगमहल की ओर आ रहा है तो वह अपने आँगन में स्वागत हेतु फूल बिछा देती है।

यहाँ एक ओर तो कवि अतिथि सत्कार से संलग्न परम्परिक आस्था को प्रकट करता हुआ आगन्तुक के स्वागत में पुष्प वर्षा का संयोजन करता है तो दुसरी ओर कवि प्रकृति का मानवीकरण करते हुए परकिया रुप में प्रस्तुत धूल राशि की व्यग्रता को या उनकी प्रेमासक्ति को प्रकट करते हुए आगामी पडाव की ओर बढ़ जाता है।

कुमार रवीन्द्र भी इस सौन्दर्य को अत्यंत संवेदना के साथ व्यक्त करते हुए लिखते हैं -

> ले अजंता सा हृदय खजुराहो-सी देह।
> मौसम के अनुरोध-सी आयी सजनी गेह॥[7]

या फिर -

> पँखुरी-पँखुरी की छुअन-बसी देह के देश।
> होठों ने मिल-बैठ कर, कहे नेह संदेश॥[8]

इन दोहों में बाह्य स्थूल सौन्दर्य को रेखांकित करते हुए एक भावाश्रित परिकल्पना को उजागर करते हुए परिस्थिति के अनुकूल सृजन किया है। वहीं समग्रता के साथ सौन्दर्यवादी अभिचेतना को अनुभव किया जा सकता है।

सामयिक दोहों में सौन्दर्य की अनुभूति कुछ-कुछ वास्तविकता पर भी जोर देती है। इन दोहों में मध्यकालीन कवियों की भांति सौंदर्य वर्णन में कल्पना की मात्र ऊँची उड़ान नहीं है। काव्य के संदर्भ में आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी सौंदर्य पर बल देते हुए कहते हैं कि -

काव्य में धर्म का शिव ही काव्य का सुन्दरम् है उनका सौन्दर्य केवल बाह्य रुप रंग तक ही सीमित नहीं है। बल्कि मन, बचन और कर्म में व्याप्त है। कर्म का सौंदर्य ही अन्ततोगत्वा शिव बन जाता है।(9)

दोहा छंद अपनी परम्परा से ही अनेकानेक अनुभूतियों का वाहक रहा है। आज के सामयिक दोहों में भी दोहाकारों की अनेक सौन्दर्य परक अनुभूतियों के दर्शन होते हैं। जिनमें अलग अलग रुप और रंग भरे पडे हैं। आधुनिक परिवेश के इन दोहों में आधुनिक रंगों की भी छटा विध्यमान है। आज कवि जब चार दीवारी से बाहर निकलकर प्रकृति के सौम्य रुप को देख रहा है तो उसके काव्य में भी प्रकृति की मनोरम छटा अपने आप ही उद्घाटित हो जाती है। दोहाकार कृष्णेश्वर डींगर जी के निम्न दोहे में कुछ ऐसी ही छबि समाई हुई हैं -

गेंदा पगड़ी बाँधकर, बार-बार बलि जाय।
सरसों नाच दिखा रही, पछवा सँग बलखाय।।(10)

सृष्टि का ऐसा सौन्दर्य नगर के बाहर खेत ख़लिहानों में ही देखने को मिलता है, जहाँ पूर्ण उफान के साथ फूला हुआ गेंदा और लहलहाती हुई सरसों अपनी पूर्ण सुन्दरता के साथ अटखेलियाँ करते हैं जिसे देखकर कवि का मन खुशी में डोलने लगता है। ऐसे ही प्राकृतिक दृश्य को लिए हुए कवि का निम्न दोहा जो सौन्दर्य परक बिम्ब और उपमा में सज्ज्ति है -

हरे खेत में बालियाँ, सिर पर ओढे धूप।
नाच रहीं मैदान में ले परियों का रुप।।(11)

इस दोहे में दोहाकार हरी-हरी बालियों को परियाँ मानकर उसका मानवीकरण करता है। सुनहरी धूप चूँनरी बनी हुई है। कहने का अर्थ है कि यह खेत में लहराती हुई बालियाँ नव यौवना सुन्दरी का रुप ग्रहण करके ओढ़नी ओढकर नाँच रही हैं। यहाँ कवि की सौन्दर्य दृष्टि उसके भावाभिव्यक्ति के माध्यम से प्रकट हो रही है। यहाँ प्रकृति का सौन्दर्यमयी दृश्य भौतिक सौन्दर्य बन गया है।

जहाँ कवि बालियों को परियों के रुप में देख रहा है और अपने मन के भावों को और भी अधिक सौन्दर्यमयी बनाकर प्रस्तुत करता है। सुन्दरता प्रत्येक की अपनी अलग अलग होती है। अतः सौन्दर्य का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है। परन्तु सौन्दर्य का क्षेत्र तभी तक सुन्दर रहता है। जब तक वह मर्यादाओं में बँधा होता है। सौन्दर्य का अत्यधिक उद्घाटन सौन्दर्यमय न रहकर विभत्स बन जाता है। आंगिक सौन्दर्य के विषय में कहा भी गया है कि -

एक सुन्दर कलाकृति के रुप (फर्म) में आंगिक सामंजस्य होना चाहिए।

भवेत् सौन्दर्य मंगाना सन्निवेशो यथोचितम्॥

अर्थात अंगों का उचित सन्निवेश ही सौन्दर्य है।

इस संदर्भ में एक रुबाई भी द्रष्टव्य है -

कभी न रुप भला या बुरा बनाता है,
नज़र का फेर सभी दोष गुण दिखाता है
कोई कमल की कली देखता है कीचड़ में
किसी को चांद में भी दाग नज़र आता है

- उदय भानु हंस

अन्य इसी तरह एक और कथ्य देखिए -

जब दर्द भरे दिल भी दुहाई देंगे
उस वक्त मधुर गीत सुनाई देंगे
आँखों में बहारों को बसा ले पगले
काटे भी तुझे फूल दिखाई देंगे।

- सूर्यभानु गुप्त

कहने का तात्पर्य यही है कि सुन्दरानुभूति रस व वाचक या श्रोता की मानसिकता पर आधारित है। उर्दूसाहित्य में रुपवर्णन के सिलसिले इसी सुन्दर-परिकल्पना पर आश्रित रहे हैं, प्रकारान्तर से नीरज भी इसी तथ्य को उद्घाटित करते हुए कहते हैं -

तन की हवस मन को गुनहगार बना देती है,
बाग के बाग को वीरान बना देती है।

निराला ने 'तोड़ती पत्थर' कविता में एक काली-कलूटी गंदी श्रमजीवी महिला में भी एक आन्तरिक सौन्दर्य की अनुभूति की। निराला की दृष्टि में वह गंदी श्रमजीवी महिला ही उसकी दृष्टि

में नूरजहाँ थी क्योंकि अपने प्रस्वेद को अपने परिश्रम से वह युग के स्वरुप को सौन्दर्यवान बना रही है। माखनलाल चतुर्वेदी ग्रामीण अंचल में जाती हुए भैंसा गाड़ी में ही सौन्दर्यानुभूति पा लेते हैं -

चूँ चरर मरर चूँ चरर मरर
जा रही चली चली भैंसागाड़ी।
गति के पागलपन से प्रेरित

कविवर पंत को प्रकृति की सुषमा के आगे अपने सामने खड़ी प्रियतमा बाला का सौन्दर्य भी फीका लगता है, वह प्रकृति का सम्मोहन छोड़कर प्रेयसी ने कुन्तल जाल में फँसने से बचना चाहते हैं -

छोड़ द्रुमों की शीतल छाया
तोड़ प्रकृति सेभी माया
बोले-तेरे बाल जाल में
कैसे उलझा हूँ लोचन।
भूल अभी से इस जग को॥

आधुनिक काव्य में देशकाल के अनुसार ही कवियों ने भावाभिव्यक्ति की है। यदि किसी खास समय या मौसम की याद करके कवि के हृदय के तार झंकृत हो जाते हैं जो तो वह उन भावों को बड़े ही मार्मिक ढंग से अपने काव्य कौशल के द्वारा प्रस्तुत भी कर देता है। सौन्दर्य के ऐसे अनेक पड़ाव हैं जहाँ कवि को नई नई अनुभूतियाँ होने लगती हैं । सामयिक दोहा छंद का सौन्दर्यवादी अभिगम भी सौन्दर्य की अनेक कलाओं से भरा पडा है। पल में जागृत हुई कवि के हृदय की अनुभूति इस दोहा छन्द के माध्यम से सहज ही व्यक्त हो जाती है। अनुभूति की ऐसी ही अभिव्यक्ति लिए माहेश्वर तिवारी जी का निम्न दोहा द्रष्टव्य है -

अंग-अंग कसमस हुए, कर फागुन की याद।
आँखों में छपने लगे, मन के फिर अनुवाद॥(13)

मौसम की भी अपनी एक सुन्दरता होती है। जिसमें अनुभूति का अहसास भी सौन्दर्यमय होता है। इसी मौसम के प्रभाव से भी शरीर में अनेक प्रकार के परिवर्तन भी आ जाते हैं जिसका असर मन पर भी पड़ता है। भारतीय संस्कृति में फागुन का महीना अत्यंत ही यादगार होता है क्योंकि दिल की हरकतें और त्योरियाँ अधिकांशतः इसी महीने में बदला करतीं हैं। आज दोहाकार भी इसी फागुन महीने की याद करके कुछ सुखद अनुभूति करने लगता है और मन की लगन आँखों से व्यक्त

होने लगती है। वैसे कहा भी गया है कि आँखें मन का आईना होती हैं। अर्थात् दोहाकार मन की बातों की अभिव्यक्ति आँखों के माध्यम से प्रकट होती महसूस कर रहा है। आगे दोहाकार कहता है कि यह अभिव्यक्ति महज़ मनुष्य ही नहीं बल्कि प्रकृति में व्याप्त सभी पदार्थ करने लगते हैं -

कोयल दूत वसंत की, फूल सिपह सालार।
बदला-बदला सा लगे, पेड़ों का व्यवहार॥[14]

इस अभिव्यक्ति का माध्यम हाव भाव एवं व्यवहार होता है जैसा कि दोहाकार स्वयं इसी बात का स्वीकार दोहे के माध्यम से करता है कि मौसम बदलते ही पक्षी, फल, फूल, वनस्पति सभी के हाव भाव परिवर्तित हो जाते हैं। दोहाकार की सौन्दर्यानुभूति की दृष्टि सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त है।

सौन्दर्य की गरिमा को लिए हुए अनेक सामयिक दोहे भाव सौन्दर्य एवं कला सौन्दर्य दोनों की ही अभिव्यक्ति करते हैं। वैसे मुख्य रुप से देखा ज़ाय तो इन सामयिक दोहों में भावों की सौन्दर्य परक अभिव्यक्ति का स्थान श्रेष्ठ है क्योंकि इन भावों की अभिव्यक्ति कवि द्वारा अनुभवित अनुभव से होती है और जब यह अनुभव की तीव्रता बहुत ही तेज़ होती है तो इसे व्यक्त करने के लिए कवि के पास कला परक शब्दों की अभिव्यक्ति भी सफल नहीं हो पाती और सौन्दर्याभिव्यक्ति के लिए विम्ब और उपमान भी तुच्छ हो जाते हैं -

सौन्दर्य सार्वजनीन अनुभूति का विषय है। वह निश्चित देशकाल की सीमा में आबद्ध नहीं होता। यह सीमातीत तथा सर्व व्याप्त है। फलतः मनुष्य मात्र के हृदय को स्पंदित करने की सामर्थ्य रखता है। मानव मन की सहज वृत्ति होने के कारण इसका विकास क्रमशः मानव के साथ होता गया। सौन्दर्यानुभूति कभी-कभी अपनी तीव्रता के कारण कभी मानव-मन को अभिभूत कर देती है और तब हतप्रभ होने के कारण व्यक्ति यह बताने में असमर्थ हो जाता है कि अमुक वस्तु सुन्दर क्यों है।[15]

अंग-अंग से रस झरे, खुश्बू-खुश्बू साँस।
गोरी का तन क्या हुआ, मानों खिला पलाश॥[16]

इस दोहे में दोहाकार ने गोरी नायिका के 'सौन्दर्यमयी अंगों' का वर्णन करने की कोशिश की है। गोरी के अंग प्रत्यंग से रस बह रहा है और सुन्दर खुश्बू भी उड़ रही है। अब सौन्दर्यमय अभिव्यक्ति देने के लिए कवि के पास उचित शब्दों एवं भावों का यहाँ अभाव साप्रतीत हुआ जिससे कवि (दोहाकार) ने सहज ही उस गोरी नायिका का खिले हुए पलाश के समान बता दिया। सौन्दर्य

की अभिव्यक्ति की यह छटा स्वयं पाठक या श्रोता ही अपने भावों के अनुसार अनुभव कर सकता है। उपमा देने से कवि का थोडा भार अवश्य ही कम हो जाता है। दोहा साहित्य में दोहा का सौन्दर्य वादी अभिगम ऐसे अनेक उपमानों से भरा पडा है। दोहाकार कैलाश गौतम सुन्दरता की भावात्मक अभिव्यक्ति को निम्न दोहे में प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि -

फूट रही है भोर की, कोंपल जैसी लाज।
ईश्वर जाने बीजुरी, कहाँ गिरेगी आज।।

काव्य में सौन्दर्य को बढाने वाले आयामों की चर्चा हम कर रहे हैं। अतः काव्य में सौन्दर्य को बढ़ाने में जिन आयामों का हम मुख्य रुप से प्रयोग करते हैं और जिनसे काव्य में सौन्दर्य की प्रस्तुति या सौन्दर्य की उद्‌भावना होती है ऐसे आयाम काव्य के अंग है। जिनके मिलने से काव्य का सौन्दर्यमयी निर्माण होता है।

यहाँ हम सौन्दर्य के विविध आयामों का वर्णन हम आधुनिक दोहे के परिपेक्ष्य में प्रस्तुत करेंगे, काव्य के सभी गुणों से युक्त इन दोहों में कवि के काव्य कौशल एवं दोहा की परम्परित गरिमा के भी दर्शन होते हैं।

कविता का सौन्दर्य

प्रत्येक कविता में अपना एक काव्य सौन्दर्य होता है। जो कविता को सम्पूर्ण रुप से आकर्षक और मनोहारी बनाता है। मुख्य रुप से कविता का संगठन उसकी प्रस्तुति, भाव, वर्ण्यविषय, वैचारिक गम्भीरता, भाषा अलंकरण, रस, एवं काव्य गुण आदि अनेक उपकरणों से सर्वांग सुसज्जित कविता का अपना एक विशिष्ट सौन्दर्य होता है जिसके द्वारा कविता सम्प्रेषणीय बनती है। कविता में इन तमाम विशेषताओं में से यदि थोड़े से भी तथ्य काव्य रचना में प्रभावक भूमिका का निर्वाह करते हैं। तब कविता अपने विशिष्ट मनोहारी स्वरुप के साथ प्रकट होती है। जिसे पढ़ने का सुनने का और गुनने का मन करता है। एक दोहा इसी संदर्भ में द्रष्टव्य है -

रवि रथ का आभास पा उड़ी चतुर्दिक धूल।
सांध्य सुन्दरी झींटती अपने आँगन फूल।।[18]

प्रस्तुत दोहे में भाषा, अलंकार, रस वर्ण्य विषय तथा मानवीय सुकोमल संवेदनाओं से संलग्न एक ऐसा नैसर्गिक सौन्दर्य विद्यमान है। जो कविता की सुषमा को या आकर्षण को अविबृद्ध करता है। दोहाकार कहता है कि सूर्य का रथ आनेवाला है इसके आभास मात्र का अनुभव करके स्वागत में धूल उठने लगी है। उठकर खडा होना अपने पूज्य की प्रतिष्ठा के प्रति अपने आदरभाव प्रकट

करने का सूचक है। सूर्य की अगवानी में जैसे पृथ्वी हर्षोन्मादिनी होकर स्वागत के लिए व्यग्र हो उठी है। धूल उड़ करके उठ रही है अर्थात वह सूर्यागमन की सूचना करता हुआ एक भौतिक दृश्य अंकित करता है कि जैसे संध्या सुन्दरी अपने किरण रुपी फूलों से पानी की तरह छींटे मारकर इस धूल को शान्त कर रही है। यहाँ भारतीय मनीषा में अपस्थित एक ग्राम्य वधु का स्वाभाविक सौन्दर्य भी उभर कर सामने आता है। जो सांध्य गो धूलि बेला में अपने आँगन में उठी हुई धूल को पानी के छींटे मारकर व्यवस्थित कर रही है। यह चित्र वैसे गो धूलि बेला का है जब गाय बछड़े आदि पशु वन प्रान्त से बस्ती की तरफ लौटते हैं तब उनके खुरों से उठी हुई धूल उडती है और जो अस्तामिल सूर्य की किरणों सी परिणामी होकर एक अलग ही अभिनव सौन्दर्य का अनुभव कराती है। यहाँ कवि एक ओर तो ग्राम्य सौन्दर्य का चित्रण कर रहा है दूसरी ओर कुल वधु के सहज क्रिया-कलापों से साक्षात्कार भी कर रहा है। तो एक अन्य रुप में वह सांध्यकाल का बडा ही मनोरम वर्णन करता हुआ पाठक या श्रोता के मन में संवेदनाओं को जाग्रत कर रहा है। इस प्रकार के अनेक दोहे काव्य सौन्दर्य की अभिनवता को प्रकट करते हैं।

जैसे निम्नलिखित दोहों में इसी प्रकार के विभिन्न सौन्दर्यवादी आयाम आभाषित होते हैं-

छज्जे से लटकी हुई, अल्हड-चंचल धूप।
धूप-छाँह में गढ़ रही, बच्चों-जैसे रुप॥[19]

आँखों में मदिरा लिये होंठ रचाये पान।
गली-गली में घूमता, फागुन सीना तान॥[20]

नई भोर बैठी लिखे, किरनों के आलेख।
पत्ते, कलियाँ, फूल सब पुलक रहे हैं देख॥[21]

सिन्दूरी हर साँझ है, कर्पूरी हर रात।
भोर हल्दिया हैं हुए, दिवस चम्पई गात॥[22]

अगर तोड़ते हम रहे, ये स्नेही फूल।
बागों में रह जाएँगे, केवल तीखे शूल॥[23]

इस प्रकार हमने उपर्युक्त दोहों में देखा कि कविता स्वयं अपने आप में ही सौन्दर्यवान है। भावाभिव्यक्ति के आधार पर कविता के आकार में परिवर्तन अवश्य हो सकता है। कविता में शुरु से अंत तक कवि की कला विद्यमान होती है। अतः कविता का सौन्दर्य सर्वप्रथम आनंददेय है। कविता के छोटे से आकार में भी जीवन की समस्त अनुभूतियाँ उजागर हो जाती हैं। और कभी-

कभी कवि को सक्षमता के कारण पूरा युग भी समाहित हो जाता है। ऐसी कविता का सौन्दर्य अजर अमर हो जाता है और प्रत्येक काल में अपनी सामर्थ्यता को प्रकट करता है।

कथ्य का सौन्दर्य

कवि अपने अनुभव को जब काव्य-बद्ध करता है तो कविता में प्रस्तुत भाव ही कथ्य होता है। कवि अपनी काव्य सृजन की कुशलता के माध्यम से इन कथ्यों में सौन्दर्य की अभिवृद्धि करता है। काव्य में कथन का विशेष स्थान है। कविता में कथ्य को जिस आकर्षित ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। वह काव्य की सुन्दरता को और भी अधिक परिवर्द्धित कर देता है। जिस प्रकार प्रिया द्वारा प्रेमी के लिए उद्‌घाटित कथ्य पाठक या श्रोता के लिए भी विशेष चमत्कृति का आधार बनता है। अर्थात कथ्य की अभिव्यक्ति भी कविता के माध्यम से सौन्दर्यमय बन जाती है। जैसे निम्न दोहे में कथ्य के सौन्दर्य को सहज ही देखा जा सकता है -

खाली बैठे रह गये, धरे हाथ पर हाथ।
बरसे बादल रात दिन, घर बाहर इक साथ॥(24)

प्रस्तुत दोहे में कवि ने असमर्थता को व्यक्त किया है। इस दोहे में कथ्य का सौन्दर्य इतना प्रभावशील है कि अभिव्यक्ति के सहज ही कई अर्थ सामने प्रकट हो जाते हैं, मानव मन की असमर्थता से कुछ न कर पाने की वजह से हाथ पर हाथ रखे रहना एक स्वभाविक स्थिति है। यहाँ करुणा के साथ-साथ कवि हृदय की संवेदना गहराइयों तक पहुंच जाती है। प्रिय की प्रतिक्षा में प्रेयसी के हाल बेहाल हैं। एक तो वर्षा का मौसम अर्थात सावन का महीना, ऊपर से प्रियतम का घर से दूर होना, प्रेयसी को अत्यधिक सता रहा है। प्रकृति में चारों ओर वर्षा हो रही है, सृष्टि भीगी है, ठण्डी-ठण्डी हवा चल रही है। दूसरी ओर परदेश गये पियतम के इंतजार में बैठी प्रियतमा की आँखों से भी निरंतर आँसुओं की वर्षा के कारण चारों ओर का वातावरण जलामयी है। दोहाकार ने प्रस्तुत दोहे में भले ही प्रकृति को माध्यम बनाकर अपने भावों की अभिव्यक्ति की है। परन्तु उसके कथ्य की प्रभावान्वित अभिवृद्ध हुई है।

प्रस्तुत कथ्य को यदि भौतिक दृष्टि से देखा जाय तो वर्षा के होने के पश्चात कोई खाली हाथ नहीं बैठता सभी के पास कुछ न कुछ काम तो होता ही है। खाली हाथ वही बैठता है जो अभाव ग्रस्त है या जिसे किसी कला का ज्ञान नहीं है। अर्थात कथ्य की अभिव्यंजना काव्य में अनेक अर्थो की भी पूर्ति करती है। अब यहाँ पाठक या श्रोता के सामर्थ्य पर निर्भर है कि वह कथ्य को किस दृष्टि से स्वीकार करता है और उसका कौन-सा अर्थ ग्रहण करता है। कविता की सृष्टि में कथ्य की इसी अभिव्यंजना को कवि का सामर्थ्य भी कहते हैं जो काव्य में सौन्दर्यवादी

अभिगम की पूर्ति करता है।

कथ्य के सौन्दर्य की सहभागिता हम निम्न दोहों में भी देख सकते हैं -

सोच रहे हैं पेड़ सब सहमें और चुपचाप।
आखिर क्यों होने लगी, इस जंगल की नाप॥[25]

इसी प्रकार कुछ और दोहे भी द्रष्टव्य है -

एक जागरण चाहती, एक नींद-अनुरुप।
अँगड़ाती है चाँदनी, जमुहाती है धूप॥[26]

निष्ठा सीता कृषक की, श्रम-उद्यम ही राम।
खेत, बैल, हल फसल हैं, पावन चारों धाम॥

फूल कहूँ खुशबू कहूँ, प्यास कहूँ या प्रीत।
मुझको लगती हो प्रिये, तुम जीवन-संगीत॥[27]

सिंदूरी सन्ध्या सजी, रंग रचा आकाश।
मीठी-मीठी आग में जलता स्वयं पलाश॥[28]

इस प्रकार सामयिक दोहाकारों ने दोहे की परम्परित गरिमा कायम रखते हुए उसमें अपने भावों की अभिव्यक्ति दी हैं। दोहे के दो टूक दायरे में कथ्य की सफल व्यंजना करके दोहे के सौन्दर्यवादी अभिगम को अग्रसर किया है। साहित्य में प्रत्येक दोहे का अपना अलग ही रंग है उसमें कथित भाव अनेक सौन्दर्यमयी एवं मनोवांधित अनुभावों की अभिव्यक्ति करते हैं।

प्रस्तुति का सौन्दर्य

काव्य के माध्यम से कथ्य की अभिव्यंजना या प्रस्तुतिकरण भी एक कला है, जो कवि की अपनी कुशलता पर भी निर्भर करता है। कथ्य का विषय कुछ भी हो परन्तु उसे काव्य के माध्यम से इस प्रकार से प्रस्तुत किया जाता है कि वह सर्वथा वाक्प्रिय एवं कर्णप्रिय हो जिससे श्रोता या पाठक को उसे स्वीकार करने में सहज भी मुश्किल न हो, काव्य में ऐसी प्रस्तुति उसके सौन्दर्य को और भी बढ़ा देती है -

सबके निज मन भाव हैं, निज सुख, निज आनन्द।
मक्खी को भाये नहीं, फूलो का मकरन्द॥

मिली किसी के प्यार की, क्या टुकड़े भर धूप।
खिला-खिला लगने लगा उस कुरुप का रुप।।

उपर्युक्त दोहे में दोहाकार ने भावों को व्यक्त करने या प्रस्तुत करने के लिए सुन्दर सटीक शब्दों का चयन किया है। प्रयोजन के अनुसार ही शब्दों के यथाउचित भावार्थ को केन्द्र में रखकर प्रस्तुत दोहों को दोहाकार ने सृजित किया है। जीवन में खुशी का प्राप्त होना या मन का प्रफुल्लित होना शारीरिक हाव भाव से भी प्रकट होता है। उपर्युक्त दूसरे नम्बर के दोहे में दोहाकार सहज ही यह अनुमान लगा लेता है कि इस खिले और निखरे मुखड़े का राज़ क्या है जब मानव के जीवन में प्रेम और खुशियों का संचार होता है तो रंग रुप निखर जाता है और हृदय में हर्षोल्लास छा जाता है। कुछ-कुछ ऐसे ही भावों को अनुभव करके कवि ने अपनी काव्य कला के द्वारा कथ्य को बडे ही सीधे साधे वरन् सौन्दर्य परक ढंग से प्रस्तुत किया है। जो रुप पहले कुरुपता की चौखट पर खडा था। जिस रुप में कभी कोई सुन्दरता नहीं थी। आज उसी रुप को शायद किसी के प्यार का अहसास मिल गया है। वह रुप किसी के लिए तो सजने सँवरने लगा है। अर्थात अचानक आये हुए ऐसे बदलाव को देखकर कवि ने प्रस्तुत दोहे की रचना कर दी है। टुकडे भर धूप अर्थात् प्रकाश की एक किरण जिसमें उस कुरुप का रुप चमकने लगा है। यह टुकडे भर धूप अर्थात प्रेमभरी वे खुशियाँ जिनसे जीवन मे नई उमंगे जाग गई हैं और कुरुपता के भाव नष्ट हो गये हैं। सुनहरी, प्रेममयी, सुखमयी, सौन्दर्यमयी रुपता प्राप्त हो गई है। जिसकी प्रस्तुति काव्य रूप में कवि ने सौन्दर्यवादी अभिगम के साथ प्रस्तुत की हैं. प्रस्तुति के सौन्दर्य को लिए हुए कुछ दोहाकारों के दोहे द्रष्टव्य हैं जिनमें भावों की अभिव्यक्ति की छटा कवि के सामर्थ्य को भी उजागर करती है-

भृकुटि चाप सायक पलक, बंकिम दृष्टि प्रहार।
चंचल चितवन ने दिये पथिक-पखेरु मार।।(30)

भींगे कपड़ों में दिखे कैसा धरा-उभार।
जला-जलाकर बिजलियाँ, बादल रहे निहार।।(31)

एक नवेली दुल्हन-सी, लजा गई है शाम।
आया खत मधुमास का, जब से उसके नाम।।(32)

बेसुध-सी वह सेज पर, लेटी आँखें मींच।
चुम्बक सा, परिदृश्य यह, रहा हृदय को खींच।।(33)

प्रस्तुतिकरण का सारा सौन्दर्य काव्यकार की सक्षम मेघा और उसकी उदात्त एवं समर्थ कल्पनाशक्ति पर निर्भर रहता है। यह सौन्दर्य कलागत भी है और भागवत भी। यह आन्तरिक भी

है और बाह्य भी। प्रस्तुति का आन्तरिक सौन्दर्य उसके भाव विन्यास का संकेत करता है। जब कि उसका बाह्य सौन्दर्य उसकी साज सज्जा, रुप गठन आदि पर अवलंबित है।

कविता में यदि सौन्दर्य की सन्निहिति नही होगी तो वह एक नीरस व्यक्तित्व बन कर रह जायेगी। कविता में रसोद्रेलन की स्थिति उसके सौन्दर्य का ही सम्प्रेषित रुप है। सतही और सहज बातों की भी प्रस्तुतिकरण की चमत्कृति से अत्यन्त आल्हाददायक तथा मनोहारी बनाया जाता है। अतः काव्य या साहित्य में प्रस्तुतिकरण की अहं भूमिका को नकारा नहीं जा सकता।

इस प्रकार हिन्दी काव्य के साथ-साथ उर्दू के साहित्य में भी प्रसिद्ध शायर मिर्ज़ा गालिब के लिए भी कहा गया है कि -

यूँ तो होंगे दुनियाँ में खुसन वर और भी अच्छे,
पर कहते हैं गालिब का अंदाजे बयाँ ही कुछ और है।

और यही अंदाजे बया ही काव्य में कथ्य की प्रस्तुति को उजागर करता है अर्थात काव्य में कथ्य को किसी सरीखे से प्रस्तुत किया जाय यह भी एक कला है। इस कला से काव्य के सौन्दर्यवादी अभिगम में वृद्धि होती है।

इसी प्रकार दोहा साहित्य में भी दो टूक शब्दों में कथ्य को प्रस्तुत कर दिया जाता है जिसमें प्रस्तुति की कला भी माइने रखती है जैसा कि हम आगे बयाँ कर आये हैं।

विषय का सौन्दर्य :-

आधुनिक काव्य में विषय का चयन मानव जीवन के इर्द-गिर्द ही घूमता है। आज का काव्य मानवजीवन, देश, समाज, घर, विषय भी इन्ही को केन्द्र में रखकर प्रस्तुत होते हैं। काव्य स्वयं अपने आप में सौन्दर्यवान है सुन्दरता का पर्याय हैं। जब काव्य की पंक्तियों में कवि के द्वारा विषय का वर्णन किया जाता है। तब काव्य की उपयोगिता और भी बढ़ जाती है अभिव्यक्ति का विषय चाहे कुछ भी हो कवि अपनी प्रतिभा के द्वारा काव्य में उसे सजा ही देता है और इस साज सज्जा के लिए अनेक व्याकरणिक अलंकरणों की सहायता लेनी पड़ती है। जिससे काव्य में वर्णित विषय पाठक या श्रोता के द्वारा सहज स्वीकार्य बनता है और रसानंद की प्राप्ति भी होती है।

दोहा साहित्य में दोहाकारों ने श्रृंगार, नीति, अध्यात्म, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि अनेकों विषयों को लेकर दोहों का सृजन किया है। प्रत्येक दोहे में अपना निजी सौन्दर्य विद्यमान है। दोहे की अपनी स्वयं की भी यह क्षमता है कि उसके फलक में साहित्य के सभी विषय समाहित हो जाते हैं और दोहे की आवृत्ति में बँधकर सौन्दर्य को अभिवृद्धि करते हैं। सामयिक दोहाकारों

ने प्रकृति एवं मौसम को विषय बनाकर भी अनेक दोहों का सृजन किया है जिनमें विषय की सौन्दर्यता को स्पष्ट ही देखा जा सकता है -

फागुन आकर दे गया कुछ ऐसा आदेश।
आँखों-आँखों में मिले फूलों के दरवेश॥[34]

इसी प्रकार -

फागुन आया गाँव में, गयी गाँव की नींद।
आँखों में सौदे हुए होठों कटी रसीद॥[35]

इन उपर्युक्त दोहों में स्पष्ट परिलक्षित होता है कि फागुन के महीने में प्रकृति का क्या व्यवहार होता है जिसका प्रभाव स्पष्ट रुप से जनजीवन पर पड़ता है। प्रस्तुत दोहा में दोहाकार एक सरल प्राकृतिक परिवेश से विषय लेकर भावों की अभिव्यक्ति करता है। फागुन का महीना होली के रंग बिरंगे रंगों से लिप्त होता है। जिसमें यौवन अंगड़ाई लेता हुआ नज़र आता है और हर युवा धडकन फागुन के गीत गाती है। इस विषय पर रीतिकाल के कवियों ने भी खूब लिखा है। प्रकृति और फागुन का महीन तो साहित्य में बड़ा ही प्रसिद्ध है। पद्माकर ने भी इसी फागुन का वर्णन करते हुए निम्न सवैया लिखा है कि -

फागु की भीर अभीरन में गहि,
गोविन्द लै गई भीतर गोरी।
भाय करी मन की पद्माकर,
ऊपर नाय अबीर की झोरी।
छीन पितम्बर कम्बर तें सु,
विदा दई मीड़ि कपोलन रोरी।
नैन नचाय कही मुसकाय लला,
फिर आइयो खेलन होरी।
- पद्माकर

इस प्रकार हम देखते हैं कि काव्य में प्रकृति एवं किसी दृश्य को भी विषय बनाकर कवियों ने काव्य में क्या खूब अभिव्यक्ति दी है। इसी प्रकार से समसामयिक दोहों में मुख्य रुप से जिस विषय पर दोहाकारों ने लिखा है। उनमें राजनीति का विषय प्रमुख है। राजनीति एवं उसमें चल रहे अनेक भ्रष्टाचारों का वर्णन इन दोहों में दिखाई देता है। सामयिक दोहा साहित्य से जुडे हुए

लगभग सभी दोहाकारों ने इस राजनीति विषय पर अपनी कलम चलाई है और इस विषय की बड़ी ही सटीकता को काव्य रुप में प्रस्तुत किया है। राजनीतिक विषय से जुड़े हुए दोहों में, दोहाकारों ने व्यंग्य की ऐसे छटा प्रस्तुत की हैं कि दोहों की सुन्दरता में और भी वृद्धि हो गई है। जैस निम्न दोहे में इसी विषय पर दोहाकार कहता है कि -

बहरों को कुर्सी मिली, गूँगों को अधिकार।
अन्धों को दर्पण दिये, लूलों को हथियार।।(36)

दोहा साहित्य में से कुछ दोहे द्रष्टव्य हैं, जो विभिन्न अलग-अलग विषयों से सम्बंधित हैं-

सामाजिक विषय पर लिखे गये दोहे की छटा दिखाते हुए हरे राम समीप कहते हैं -

रिश्वत खोर समाज में कौन किसे समझाय।
सारे नंगे हो जहाँ कोई क्यों शरमाय।।(37)

पर्यावरण को विय बनाकर कवि विष्णु विराट ने जो अभिव्यक्ति दी है वह सहज ही दोहा की परम्परित गरिमा में वृद्धि करती है -

धुँआ मसीनन को उठो, नभ भयो स्याह मलंग।
धरा धूँजती में धसे, नर नारी किलंग।।(38)

श्रृंगार विषय पर अभिव्यक्ति देते हुए कैलाश गौतम का निम्न दोहा द्रष्टव्य है -

गोरी धूप कछार की हम सरसों के फूल।
जब जब होंगे सामने तब तब होगी भूल।।(39)

नीति को विषय बनाकर दोहाकर विश्व प्रकाश दीक्षित लिखते हैं कि -

सीधा बेशक धनुष पर है संहारक बान
सर्प विषैला ही रहे भले करे पयवान।।(40)

इस प्रकार विभिन्न विषयों को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर सामयिक दोहाकार अपने कवि धर्म का पालन कर रहे हैं और अपने काव्य कौशल के द्वारा साहित्य के सौन्दर्य की अभिवृद्धि भी कर रहे हैं।

ध्वनि का सौन्दर्य

साहित्य में ध्वनि को लेकर पूरा एक सम्प्रदाय है जिसके प्रवर्तक आचार्य आनंदवर्धन हैं।

उन्होंने तो ध्वनि को ही काव्य की आत्मा कहा है। काव्य परम्परा में किसी ध्वनि की तीन शब्द शक्तियाँ कार्य करती हैं (1) अभिदा, (2) लक्षणा (3) व्यंजना। कवि कविता के माध्यम से अपने काव्य कौशल के तेवर इन्ही शब्द शक्तियों के द्वारा प्रकट करते हैं काव्य में जब ध्वनि की बात आती है तो वहाँ पर उसके दो पक्ष होते हैं। एक प्रस्तुत और दूसरा अप्रस्तुत। काव्य में प्रायः अप्रस्तुत का ही ज्यादा महत्व होता है। काव्य में जो कहा जाता है उसका उतना महत्व नहीं होता जितना कि उसके अभिप्राय से, यह अभिप्राय ध्वनि में रहता है। अतः काव्य में ध्वनि का भी विशेष महत्व है। काव्य में ध्वनि से उच्चरित होने वाले शब्दार्थ को नहीं बल्कि उसके पीछे छुपे हुए आशय या अभिप्राय को ग्रहण किया जाता है। जिससे काव्य में गम्भीरता का संचार होता है और जिससे काव्य का असली सौन्दर्य अपने समस्त गुणों के साथ प्रकट होता है। ध्वनि सौन्दर्य को व्यक्त करता हुआ निम्न दोहा द्रष्टव्य है -

सपने बंजारे हुए, हुई भगोडी नींद।
अभी चैन की बाँसुरी युग पाया न खरीद।।(41)

इस दोहे में बंजारे, भगोड़ी, बाँसुरी, खरीदना आदि जैसे शब्दों का सीधा कोई अर्थ नहीं है बल्कि यहाँ पर उनकी ध्वनि से आशय निकाला गया है। यदि देखा जाय तो प्रस्तुत दोहे में सापेक्ष रुप से कुछ खास नहीं कहा गया है। परन्तु उसके गूढ़ अर्थो को यदि हम देखते है तो जीवन की एक बहुत बडी फिलोसोफी दिखाई देती है। बंजारे शब्द का अर्थ एक जाति से है परन्तु यहाँ उसका आशय जाति से न होकर इधर-उधर घूमने फिरने से है। अर्थात् जिसका कहीं एक जगह ढौर न हो। प्रस्तुत दोहे में कहने का तात्पर्य है कि नींद का अब कोई भरोसा नहीं रहा है। इसी प्रकार दोहे की दूसरी पंक्ति में कवि ने 'चैन की बाँसुरी' शब्द का उल्लेख किया है जो ''चैन की बाँसुरी बजाना'' वाली कहावत से लिया गया है। काव्य में ऐसे शाब्दिक प्रयोगों से उसकी सुन्दरता और भी बढ जाती है, दोहे में ''चैन की बाँसुरी'' का अर्थ सुख चैन की एकाग्रतासे हैं जिसे अभी तक यह संसार या फिर इस युग का मानव नहीं प्राप्त कर सका है।

उपर्युक्त दोहा के भावों को यदि समग्र रुप से प्रकट किया जाय तो यह स्पष्ट अर्थ सामने आता है कि संसारी मानव के पास सुख सुविधा के सभी साधन उपलब्ध है। परन्तु फिर भी उसके पास सुकून या चैन नहीं है । उसे रात में नींद नहीं आती जिसके कारण सुहावने सपनों का भी आवागमन बंद हो गया है और इस युग की यह मजबूरी है कि वह सुख चैन की एकाग्रता को नहीं प्राप्त कर पा रहा है। मोह माया के पीछे निरंतर अपने तन-मन को दौड़ा रहा है। दोहा का भावार्थ प्रकट करते समय यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि शब्दार्थ में छिपे हुए मूल आसय ही प्रमुख हैं। इसी प्रकार से ध्वनि के द्वारा भी भाव बदल जाते हैं। अब यह पाठक या श्रोता के ऊपर निर्भर

करता है कि वह शब्द के किस अर्थ को ग्रहण करता है। काव्य का यह गुण निश्चित ही काव्य सौन्दर्य की अभिवृद्धि करता है। इसी प्रकार निम्न दोहों का भी अवलोकन कर सकते हैं -

प्रिये! सलोने रूप का पानिप या परिहास?
छक्क-छक्कर पीते नयन फिर भी प्यास उदास॥(42)

आग लगी उस गाँव में, गूँजा हाहाकार।
लोग बुझाने चल पड़े ले-ले कर अंगार॥(43)

विकृत हुए अपने सभी, भाषा, भोजन,वेश।
छाया महज़ अतीत की, अब तो भारत देश॥(44)

क्यों न मनायें आज हम स्वर्ण जयन्ती वर्ष।
भय, भूख और भ्रष्टता, सबका तो उत्कर्ष॥(45)

कहने का तात्पर्य है कि काव्य में कथ्य को जितना घुमा फिराकर प्रतीकों, उपमानों के द्वारा कहा जाय काव्य की सुन्दरता उतनी ही बढ़ती जाती है। कहीं-कहीं पर तो काव्य में छिपे हुए गूढ़ भावों को शाब्दिक ध्वनि के द्वारा प्रकट किया जाता है। अतः यदि हम संक्षिप्त में कहें तो काव्य सुन्दरता उसके कलात्मक अभिव्यक्ति पर निर्भर है। जिसका एक माध्यम ध्वनि भी है।

वक्रोक्ति का सौन्दर्य

काव्य में सौन्दर्यता लानेवाले अनेक मानदण्ड़ो में वक्रता का भी महत्वपूर्ण स्थान है। किसी बात को सीधे-सीधे कह देना एक आम बात है। मगर उसे घुमा-फिराकर, तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करना एक कला है जो काव्याभिव्यक्ति में अक्सर देखने को मिलती है।

भारतीय काव्य शास्त्र में वक्रता को अनिवार्य माना गया है। इसी परिपेक्ष्य में आचार्य कुंतक कहते हैं -

वक्रोक्ति काव्य जीवितम्॥

अर्थात् काव्य में वक्रता का होना अनिवार्य है। वह काव्य की प्राणतत्व है। कविता केवल वस्तु वर्णन नहीं है बल्कि कविता में वस्तु को एक विशिष्ट ढंग या वक्र ढंग से रखा जाता है। वकृता में एक प्रकार का काव्य सौन्दर्य होता है। जैसे नदी यदि सीधी चाल से चलती जाय तो उसका सौन्दर्य आकर्षक नहीं होता है। परन्तु जब नदी टेढी मेढी घूमती फिरती वक्र गति से गुजरती है तो उसका सौन्दर्य आकर्षित हो जाता है। ठीक इसी प्रकार से कवि के द्वारा की गई भावों की वक्र

अभिव्यक्ति काव्य सौन्दर्य में अभिवृद्धि करती है -

रुप तुम्हारा है भँवर नाव हमारे नैन।
तट पायेंगे या नहीं? चिन्तित मन बेचैन॥

कवि अपने मन की सरल भावना को घुमा फिराकर इस प्रकार से व्यक्त करता है कि काव्य में गम्भीरता बढ़ जाती है। उपर्युक्त दोहा में दोहाकार कहता है कि हे प्रिये तुम्हारे रुप में इतना दीवाना हो गया हूँ और इसे पा लेने के लिए चिंतित और बेचैन भी हूँ। इतनी सी बात को दोहाकार अपने काव्य कौशल के द्वारा वर्णित करते हुए कहता है कि हे प्रिये तुम्हारा यह रुप नदी में घूमती हुई भँवर के समान है जिसमें नाव रुपी मेरे नैन फँस गये हैं और अब मुझे चिंता होने लगी है कि इस भँवर से नाव अर्थात नैन निकलकर तट पर सुरक्षित वापस आ पायेंगे या नहीं। प्रस्तुत दोहा में दोहाकार रुप को भँवर नाव को नैन, तट को मंज़िल बताकर अपने भावों को वक्रता से प्रस्तुत करता है। जिससे कवि के मन के भाव भी व्यक्त हो जाते हैं और कवि का काव्य कौशल भी उद्घाटित हो जाता है। साथ ही साथ काव्य का सौन्दर्य भी बढ़ जाता है। निम्नलिखित दोहों में इसी प्रकार के भाव व्यंजना को लिये हुए कथ्य देखे जा सकते हैं -

विश्ववाटिका में सदा खिले सुगन्धित फूल।
थिर हो मधु पीते मधुप, चुभें भ्रमित को शूल।[47]

मै आखिर क्या नही हूँ? सोचो रहकर मौन।
स्वयं पता चल जायगा मैं हूँ आखिर कौन॥[48]

नहा उठे आलोक में नगर, गाँव घर-द्वार।
किन्तु घिरा तम से अभी, अन्तस का संसार॥[49]

ऐसी द्विविधा में पडा, है दर्पण चितचोर।
किसे बताएँ साँवली किसे बताए गोर॥[50]

हरियाली की गाँठ जब, पतझर ने दी खोल।
पेड़ों से होने लगे, सारे पत्ते गोल॥[51]

इस तरह से दोहाकाव्य में अपनी बात को कहने के लिए कवि अनेक रीतों का सहारा लेते हैं। काव्य शास्त्रीय नियमों का पालन करते हुए अलंकार, उपमा, बिम्ब, प्रतीक आदि अनेक मान दण्डों के साथ साथ अपनी स्वयं की काव्य सृजन की कला का परिचय, अभिव्यक्ति के माध्यम से पाठक या श्रोता को दिखा देते हैं। अंततः हम सभी जानते हैं कि काव्य का मुख्य प्रयोजन ही

आनंद की प्राप्ति है। अतः काव्य में सौन्दर्य का मान प्रमुख है। और कवि आदि से अन्त तक काव्य सौन्दर्य पर ध्यान केन्द्रित रखता है। जिसमें दोहा छंद के सौन्दर्य वादी अभिगम को स्पष्ट देखा जा सकता है।

संवेदनाओं का सौन्दर्य

संवेदना मानव हृदय में उत्पन्न होने वाली एक कोमल अनुभूति है। एक सुकवि का इन कोमल संवेदनाओं के साथ निकट का सम्बंध होता है। कवि स्वयं सहृदय होने के कारण इस हार्दिक भावना को शीघ्र ही अनुभव करता है और काव्य रुप में अभिव्यक्त भी कर देता है। आधुनिक साहित्य से हटकर मानवजीवन से जुड़ा हुआ है। अतः काव्य में संवेदनात्मक भावों की अभिव्यक्ति सहज ही प्रकट हो जाती है।

दोहा के छंद विन्यास में विषय को अति संक्षेप में प्रकट कर देने का ही अवकास होता है। अतः दोहा साहित्य में संवेदना की अभिव्यक्ति दोहाकार के काव्य कौशल पर भी निर्भर है, जिससे काव्य का सौन्दर्य बढ़ता है।

आज 'अति' के कारण कला का संवेदनशील पक्ष जर्जरित-सा हो रहा है, हृदय एवं बुद्धि का सही संतुलन साहित्य की गरिमा को चिरस्थायित्व देता है, समकालीन बौद्धक सृष्टि में जो धारणाएँ प्रचलित हो जाती हैं। उनसे सभी रचनाकार प्रभावित होते हैं। रचनाकार की प्रतिभा जीवन के सत्य को उसके आन्तरिक एवं बाह्य दोनों दृष्टियों से समग्र रुप से देखती है और उसके ग्रहण करने की संवेदनशीलता जनसाधारण के लिए संप्रेष्य हो जाती है और संबेद्य भी। सामयिक दोहों में आज का जीवन बोलता है आँसू बहाता है और समय की कठोरता को कोसता भी है इन दोहं में सम्प्रेषण का माध्यम बनाकर दोहाकार ने संवेदनाओं का मार्मिक वर्णन किया है इसी प्रकार के कुछ दोहे द्रष्टव्य हैं -

तुम जीवन से क्या गये, गई फूल से गंध।
जैसे कविता से गये, रस, पिंगल, औ छंद॥[52]

कवि अपने हृदय की संवेद्य अनुभूति को प्रकट करते हुए कहता है कि हे प्रिये तुम मेरे जीवन से चली गई हो तो यह जीवन नीरस हो गया है। इसके सारे सुख आह्लाद समाप्त हो गये हैं। इस जीवन में जो सौन्दर्य था जो सुगंध थी, वह सब तुम्हारे जाने के बाद खत्म हो गई हैं। अब मेरे जीवन का कोई अर्थ नहीं रह गया है। यहाँ दोहाकार अपने हृदय की मार्मिक संवेदनाओं

को प्रकट करता है। कवि आगे कहता है कि यह मेरा जीवन अब उस फूल की भांति हो गया है जिसमें से रंग, सुगंध और सौन्दर्य खत्म हो जाता है और वह किसी काम का नहीं रहा। फूल की अहमियत तभी होती है जब उसमें सुगंध, रंग और सौन्दर्य होता है। और इसी तरह का एक और द्रष्टान्त प्रस्तुत करते हुए कवि इसी दोहे में आगे कहता है कि हे प्रिये मेरे जीवन में तुम्हारी वही आवश्यकता है जो काव्य में रस, पिंगल और छंद की होती है। जिनसे काव्य में सजीवता का संचार होता है। अतः हे प्रिये जब से तुम मेरे जीवन से गई हो तबसे ये जीवन रुखा-सूखा और निस्तेज हो गया है। अब इसमें कोई उमंग नहीं रही कोई सुन्दरता नहीं रही।

यहाँ एक ओर कवि अपने साथी के सामीप्य सुख की महत्ता ज्ञापित कर रहा है, वहीं दूसरी ओर अपने अन्तस्थ प्रणयानुरागी भावों को भी व्यक्त कर रहा है। वह जब कविता में रस, अलंकार, छन्द की बात करता है तो काव्य गुणों को रेखांकित करता है। कविता में काव्यानुशासन का वह पक्षधर है। इसी तरह काव्यसौन्दर्य के उपकरणों की हिमायत करता है, इसी संदर्भ से जुड़कर वह अपनी प्रेयशी के संस्कारगत सौन्दर्य की सज्जा को भी महत्ता देता है। कवि छान्दस तथा काव्यानुशासित कविता का समर्थक है, तो उसकी प्रतीति वह प्रेयसी के पुण्यानुराग की शालीनता और अनुशासित भंगिमा में भी करता है। कवि को काव्यानुशासित छन्द और सौन्दर्याच्छादित प्रेमिका दोनों से ही लगाव है।

संवेदना के धरातल पर वह प्रेयसी को कभी फूल तो कभी वनिता मान लेता है। फूल भी वह जिसमें रुप है, रंग है, सुगंध है, आकर्षण है और कविता भी वह जिसमें राग है, सौन्दर्य है, आकर्षण है और इन्द्रधनुषी रंग है।

इस प्रकार कवि दोहा के माध्यम से अपने हृदय की संवेदनाओं को प्रस्तुत करता है। कवि की काव्य सृजन की प्रतिभा के कारण दोहा में संवेदना की प्रस्तुति उसके सौन्दर्य को स्थापित करती है। संवेदना के एक अन्य अनुभूति को निम्न दोहे में अनुभव कर सकते हैं -

कुछ टूटा, कुछ टूटता, कुछ दोगी तुम तोड़।
इस जीवन को दे दिये, तुमने कितने मोड़ ।।[53]

संवेदनशील हृदय की मार्मिक अभिव्यक्ति को प्रकट करते हुए दोहाकार कहता है कि यह जीवन में अब तक लयता या एकरुपता नहीं रही है। कदम-कदम पर ठोकरें खा-खा कर यह जीवन टेढ़ा-मेढ़ा हो गया है, हे प्रिये प्रेम के धागे को तुमने अनेक बार तोड़ा है। साथ ही साथ मेरे भाग्य की भी ऐसी लेखनी रही है कि स्वभावगत सहज ही इसने कई अच्छे-बुरे कष्ट सहे हैं। और कुछ तुम्हारी वजह से भी मेरे इस जीवन में अनेक परिस्थितियाँ प्रतिकूल हो गयी है जिससे प्रेम के धागे

में कई गाँठें भी पड़ गयीं है। अतः यह मेरा जीवन न जाने कितने ही टेढे-मेढे रास्तों में बँट गया है।

दोहाकार प्रस्तुत दोहे में हृदय की संवेदनाओं को बड़े ही सरल एवं सीधे-साधे ढंग से प्रस्तुत कर रहा है। मगर फिर भी दोहे में संवेदना की मार्मिकता होने के कारण उसका सौन्दर्य कायम रहा है। दोहा साहित्य में ऐसे अनेक दोहे भरे पड़े हैं जिनमें सामाजिक-पारिवारिक बिखराव के कारण उत्पीडित मानव हृदय अत्यंत संवेदनशील दिखाई देता है।

संवेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति के साथ सहज सौन्दर्य का भी निर्वाह करते कुछ दोहाकारों के दोहे द्रष्टव्य हैं -

सभी खिलौने रो रहे, रोज़ रहे संतप्त।
आकर इनसे खेल तू, रहें न ये अभिशाप्त।।(54)

पर मंदिर सहमा खड़ा, मस्जिद है हैरान।
लोग सड़क पर लड रहे गीता बड़ी कुरान।।(55)

रेत-रेत जब से हुए, आपस के व्यवहार।
मुरझाये दिखने लगे, सब उत्सव त्यौहार।।(56)

तन से मन कटकर रहे, यह कैसा दुर्योग।
जैसे अपने आपसे, जियें बिछुडकर लोग।।(57)

मनोविकार का सौन्दर्य

जैसा कि कहा जा चुका है कि आधुनिक साहित्य मानव जीवन के ईर्द-गिर्द घूमता है और आज साहित्य सृजन के जो विषय है वे भी मानव समाज से लिए गये हैं। अतः साहित्य का सम्बंध मानव मन के साथ स्वतः ही हो जाता है। काव्य में विषय का चयन मन के अच्छे एवं बुरे विचारों की पृष्ठभूमि पर होता है।

आधुनिक दोहा साहित्य में तीखी व्यंग्यपूर्ण अभिव्यक्ति, समसामयिक विषयों को और भी सौन्दर्यवान बनाती है। कवि के अनेक भाव जिनमें उत्साह और कुण्ठा दोनों ही प्रकार की स्थिति दिखाई देती है। आधुनिक पल-पल बदलते परिवेश भारतीय संस्कृति का निरंतर ह्रास एवं पश्चिमी सभ्यता के चलते समाज में अनेक परिवर्तन आ गये हैं जिसमें मानवीय विचारधारा अत्यधिक प्रभावित

हुई है। अतः सम्बंधों के प्रति भी मात्र औपचारिकता रह गयी हैं। कवि इन सभी भावनाओं को अनुभव करता है क्योंकि कवि भी मावन समाज के साथ ही जुड़ा हुआ है, मन में उत्पन्न विचारों के आधार पर ही जीव आपसी व्यवहार करता है। अतः मन के भावों को शारीरिक चेष्टाओं से भी जाना जा सकता, एक कुशल कवि की दृष्टि इन भावों को सहज ही पढ लेती है। इस प्रकार मानव मन की मानसिकता को प्रकट करने वाले ऐसे अनेक दोहाकार हैं जिन्होंने विषय वर्णन के दौरान कथ्य के साथ व्यंग्य को भी लिपटाकर इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि काव्य कला की दृष्टि से इन पदों की सौन्दर्य चेतना में वृद्धि हो जाती है -

बचपन से अब तक सदा, सहते रहे बिछोह।
अब खुद से भी बिछुडकर, होगा दुःख न मोह॥(58)

जीवन के प्रत्येक पड़ाव में मन के अलग-अलग विचार एवं मान्यताएं होती हैं। आधुनिक जीवन की आपाधापी में सभी भागे जा रहे हैं। कोई किसी के लिए नहीं रुकता है। यहाँ सभी को अपने दुःख स्वयं ही सहने पडते हैं। उपर्युक्त दोहा मन के ऐसे ही भावों को बाँधे कह रहा है कि जब एक-एक करके सबने साथ छोड़ दिया है तो अब हमें अपने आप से भी कोई लगाव नहीं रहा। अब यदि हम स्वयं से भी बिछड़ जायें तो कोई दुःख न होगा । अर्थात् बिछोह का मारा हुआ हृदय बचपन से ही सानिध्य और सहचर को प्राप्त करने के लिए मथ रहा है परन्तु सब साथ छोड़कर चल दिये हैं। समय पर कोई भी काम नहीं आया। अतः वह सोचता है कि अब जरा भी दुःख नहीं होगा क्योंकि मैं अपने आप को किसके लिए जिन्दा रखूँ और मेरे मरने से दुःख भी किसे होगा। अतः मेरा होना या ना होना सब समान है।

इस प्रकार दोहे में स्पष्ट रुप से मानवीय मन की अन्तर्वेदना का स्पष्ट ही अनुभव किया जा सकता है। बचपन से जवानी और फिर बुढापा सभी सांसारिक मोहमांया को लेकर भागता रहा। जीवन की राह में न जाने कितने मोह बंधन आये और चले गये अब जब अपने आप से बिछड़ने का समय आया है तो यह सब याद करते हुए और अपने से बिछड़ते हुए मुझे बिल्कुल दुःख नहीं होगा। इसी प्रकार दोहाकार एक अन्य दोहे में कहता है कि -

अपना कोई इस तरह, क्या जाता है रुठ।
मेरी आँखों से गिरे, जैसे आँसू टूट॥

कवि कहता है कि जो अपने सगे होते हैं जिनके साथ निकट का सम्बंध होता है, जिसे हम अपना कहते हैं वे भी पलभर की हवा में बदल जाते हैं। आज अपने सम्बंधो के धागे इतने मजबूत नहीं है कि वे जरा सा जोर सहले थोडी सी खींच-तान में ये टूट जाते हैं और हृदय की

द्रावक स्थिति पैदा कर देते हैं। वैसे एक कहावत भी है कि ''ताली एक हाथ से नहीं बजती'' कहने का तात्पर्य है कि आज मानवीय जीवन में घटित विडम्बनाओं में किसी एक का दोष नहीं दिया जा सकता। जैसे-जैसे जीवन की स्थितियाँ बदलतीं हैं उनमें परिवर्तन भी सहज रुप से आ ही जाता है। जब मन खुश होता है तो सभी कुछ सहज ही अच्छा लगता है। और ब मन दुःखी होता है तो जीवन निस्तेज और भारी हो जाता है। मावन मन के विकारों से जुडे हुए कुछ दोहे दृष्टव्य हैं -

सम्बन्धों की भूमि पर, उभरे नये पठार ।
पथरीला होता गया, सपनों का संसार ।।(60)

रंग पड़े तन पर मगर, मन जाता है भींग।
मिसरी-सी लगने लगी, देखो कैसे हींग ।।(61)

किंचित् भी चिंतित न था, कड़ी धूप में गाँव।
जब तक थी सिर पर रही, उस बरगद की छाँव ।।(62)

स्वार्थपूर्ण, रिश्ते हुए, मेल-जोल, व्यापार।
जहाँ कभी चौपाल थी, आज वहाँ बाजार ।।(63)

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि भावों खट्टी मीठी अनुभूतियों को लेकर दोहाकार दोहों में अनेक प्रकार के रसा रंग भरकर उन्हे सजाता है। जिनमें मानव मन के सुख-दुःख झूलते हुए नज़र आते हैं। इस प्रकार रेखांकित करते हुए कवि अपने भावों को सौन्दर्यमयी अभिव्यक्ति देता है।

प्रकृति का सौन्दर्य

साहित्य के अन्तर्गत रचनाकारों ने प्रकृति के सौन्दर्य को बड़ी ही नजदीक से देखा है वैसे तो हिन्दी साहित्य के प्रत्येक काल में प्रकृति वर्णन को लेकर इतना लिखा गया है कि कोई कोना छूटा नज़र नहीं आता। फिर भी निरंतर आज भी इस विषय पर रचनाकारों की लेखिनी गतिशील है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में पूरा छायावाद प्रकृति को केन्द्र में रखकर ही सृजित हुआ है। सुमित्रा नंदन पंत जैसे कवि तो प्रकृति सौन्दर्य के सुमधुर चितेरे तक कहे जाते हैं। उन्होंने नारी सौन्दर्य से अधिक सौन्दर्यवान प्रकृति को माना है। कहने का तात्पर्य है कि प्रकृति के सौन्दर्य को साहित्य में बड़ा ही सम्मान मिला है जो आज भी रचनाओं में देखा जा सकता है। कहीं बदलते

मौसम का खुशनमी मिजाज़ है तो कहीं वसंत का आनंद तो कहीं फागुन की मस्ती। कहीं खेतों में सरसों नाच रही है तो कहीं पेड़ों की डालियाँ हवा में झकोरे खा रही हैं। कहीं चंद्रमा की शीतल चाँदनी आहलाद जगा रही है तो कहीं ठण्डी हवा की छुअन रोंवे खडे कर रही है, कहीं फूल खिले हैं तो कहीं पतझड़ ने बेरुखी कर दी है। कहने का तात्पर्य है कि कवियों ने प्रकृति के अनेक सौन्दर्यमयी दृष्यों का अवलोकन किया है। प्रकृति का यह सौन्दर्य वासनामयी न होकर वास्तविक शृंगार की परिभाषा प्रस्तुत करता है।

प्रकृति से सम्बंधित काव्य की स्वच्छ एवं सौन्दर्य भावना पर कहा भी गया है कि-

छायावादी कवि प्रेम और सौन्दर्य के कवि रहे हैं। इनके काव्य में सौन्दर्य के प्रति एक अद्भूद ललक के दर्शन होते हैं। इनके काव्य में वर्णित सौन्दर्य स्थूल और शारीरिक न होकर पूर्णतः भावात्मक है। अतीन्द्रिय है यह सौन्दर्य कहीं भी वासना के पंक से पंकिल होने नहीं पाया है।(64)

काव्य का प्रमुख अंग उसका सौन्दर्यवादी अभिगम होता है जिसकी पूर्ति प्रकृति सौन्दर्य के भी द्वारा होती है। कवि प्रकृति को आलम्बन बनाकर अपने भाव प्रस्तुत करता है। दोहा साहित्य में भी प्रकृति को लेकर अनेक दोहे लिखे गये हैं। यही नहीं पूरी की पूरी ऋतुओं का वर्णन भी दोहा साहित्य में देखने को मिलता है बिहारी जैसे श्रेष्ट दोहाकार प्रकृति को माध्यम बनाकर शृंगार का सृष्टिव्यापी वर्णन करते हैं। दोहा मुक्तक काव्य होने के कारण विषय वर्णन की इसमें एक सीमा होती है। अतः प्रकृति के प्रति कवि के भाव थोड़े में ही अधिक कह देने पर लालायित रहते हैं। इसीलिए गागर में सागर भरने की उक्ति कवि पर ही सफल हो सकती है। कविता में सौन्दर्य को बढानेवाले अन्य सभी उपकरणों या अलंकरणों के साथ साथ कवि की अपनी सूझ-बूझ एवं कल्पना शक्ति भी कार्य करती है।

कवि जब किसी सौन्दर्य की अनुभूति को काव्यांकित करने की मानसिकता बनाता है, तब वह उसके सम्पूर्ण परिवेश को संभालता है। सारी भूमिका को सजाता संवारता है। इस आशय का एक दोहा द्रष्टव्य है -

भाग रहा है खेत में कंचन मृग अविराम।
श्याम श्वान दौड़ा रहा, घिरने को है आम।।(64)

धूप की साँझिल स्वर्णिम मिलें किसी कंचन मृग की तरह है जो शाम के घिरते अँधियारे के प्रतीक रुप में किसी काले कुत्ते की तरह उस मृग को भागने पर बाध्य कर रहा है। अर्थात

दिवस का अवसान हो रहा है, स्वर्णिम प्रकाशन जैसे अस्ताकल की ओर भाग रहा है। शाम का अंधकार जैसे उसका पीछा कर रहा है। यह अंधकार काला कुत्ता है जो खेत में चर रहे स्वर्ण हिरन को भगा रहा है। अंधकार प्रकाश को समाप्त कर रहा है या उसे भागने पर बाध्य कर रहा है। खेत में विचरता हिरन भी काले कुत्ते से डर कर भाग रहा है। यह एक मानवीकृत विश्लेषण है जो व्यक्ति की प्राकृतिक मनोदशा को विवेचित करता है। इस प्रकार प्राकृतिक सौंदर्य की आभा को लिये हुए प्रस्तुत दोहा सौन्दर्य की छटा प्रस्तुत कर रहा है। साथ ही कवि की अपनी कल्पना उसके सहज सौन्दर्य को और भी अधिक बढ़ा रही है, इसी तरह से प्रकृति के सौन्दर्य वर्णन को लेकर दोहाकार काव्य की या दोहे की सृष्टि करता है।

इसी तरह के प्राकृतिक सौन्दर्य को प्रदर्शित करते हुए कुछ और दोहों की छटा हम निम्न दोहों में देख सकते हैं जिसमें दोहाकार ने प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ साथ अपनी काव्य कुशलता के द्वारा भी चार चाँद लगा दिये हैं -

दीख रहा है क्षितिज में, सूरज का मस्तूल।
खिलते नीले सिंधु में, सुर्ख कमल के फूल।।(65)

बूँदों के सँग उठ रही, सौंधी-सौंधी गंध।
धरती अब रचने लगी, हरियाली के छंद।।(66)

आयी खंजन-नयन ऋतु, शरद् चन्द्रिका-स्नात।
तारक-खीलों से भरी, नभ की विमल परात।।(67)

तन श्यामल है, किन्तु मृदु मन में स्नेह-उजास।
लगी बुलाने छाँह है, सबको अपने पास।।(68)

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि कहीं प्रथम वर्षा से मिट्टी की सौंधी गंध उड़ रही है। तो कहीं शरद ऋतु की चाँदनी शीतलता दे रही है अर्थात मौसम का प्रभाव प्रकृति पर स्पष्ट ही देखा जा सकता है। नित नये रंग बदलनेवाली प्रकृति की आभा और उसका काव्यमय वर्णन पाठक और श्रोता के मन में आनंद की पूर्ति करता है।

अभिप्राय का सौन्दर्य

काव्य की सृष्टि में अनेक सौन्दर्यवादी आयाम हैं। जब किसी कुशल एवं सक्षम कवि के द्वारा कथ्य को काव्य रुप दिया जाता है। तो शब्दों में अर्थ को ढूँढ़ा जाता है। पाठक और श्रोता निरंतर यह प्रयास करते हैं कि काव्य में कवि के द्वारा प्रस्तुत कथ्य का अभिप्राय क्या है? आखिर

कवि क्या कहना चाहता है? क्योंकि बिना अभिप्राय के काव्य का सौन्दर्य अपूर्ण है। काव्य के अर्थ में ही उसका अभिप्राय छुपा होता है जिसकी खोज करना सुधी पाठकों पर निर्भर है।

समसामयिक दोहा साहित्य में ऐसे अनेक विषय भरे पडे हैं। जिसकी शब्द रचना में अनेक अभिप्राय छिपे हुए हैं। ऐसे अभिप्राय के सौन्दर्य को व्यक्त करता निम्न दोहा द्रष्टव्य है -

प्रिया तुम्हारे गाँव की, अजब निराली रीत।
हवा छेड़ती प्रेम-धुन, पत्थर गाते गीत।।(69)

उपर्युक्त दोहे में दोहाकार अपने मन के सहज भावों की अभिव्यक्ति दे रहा है। नायक अपनी प्रियतमा को सम्बोधित करते हुए कहता है कि तुम्हारे गाँव की यह रीत तो अजीब है। ऐसा मैने पहले कभी नहीं देखा कि हवा में संगीत की लहर व्याप्त हो पूरा वातावरण प्रेममयी होकर आनंदमग्न हो यहाँ तक की पत्थर जैसे निर्जीव और निष्ठुर भी इस प्रेम की धुन का अहसास कर रहे हैं और वे भी प्रेम के रंग में रंगकर गीत गा रहे हैं। कहने का तात्पर्य या अभिप्राय है कि प्रिया के प्रेममयी सम्मोहन में नायक इतना आसक्त है कि उसे वहाँ की समस्त प्रकृति की मोहक और प्यारी लगने लगी है। जिसका प्रभाव सृष्टि व्यापी दिखाई दे रहा है। प्रेम की व्यापकता को अभिप्राय के माध्यम से दोहे में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ नायक प्रकृति को माध्यम बनाकर अपने प्रेम की सर्व व्यापकता को उल्लेखित कर रहा है। जिसमें उसके स्वयं के प्रेम का अभिप्राय छुपा हुआ है। काव्य में ऐसे प्रयोजनों से विषय या कथ्य की सुन्दर प्रस्तुति के साथ-साथ सम्पूर्ण काव्य का सौन्दर्य भी बढ़ता है, सौन्दर्य की ऐसी ही गरिमा से मंडित अभिप्राय को प्रस्तुत करते कुछ दोहे द्रष्टव्य हैं -

मन यादों का पालना, लोरी गाती पीर।
निंदिया सपने बाँचती, बँधी पाँव जंजीर।।(70)

वह बबूल पहने खड़ा काँटों वाले वस्त्र।
पास न आती चाँदनी, दूर खड़े नक्षत्र।।(71)

मन तो कोरा ही रहा, पड़ी न कोई रेख।
निशि दिन चित्र उकेरती, थकी जिन्दगी देख।।(72)

उसका है ये वायदा, जीता अगर चुनाव।
पानी पर तैराएगा, वो पत्थर की नाव।।(73)

इस प्रकार कवि के कथन में भी अभिप्राय् छुपा होता है जो काव्य की व्याख्या के द्वारा उल्लेखित होता है। कविता में अभिप्राय का विशेष महत्व होता है। काव्य की गम्भीरता से निकलकर

जब अभिप्राय सामने आ जाता है। तब काव्य सहज सरल हो जाता है। काव्य में अभिप्राय की प्रस्तुति उसका स्वभाविक गुण है क्योंकि बिना प्रयोजन के काव्य का सृजन ही नहीं होता, अतः कविता में रहस्य न होना भी स्वभाविक है।

अध्यात्म का सौन्दर्य

मुक्तक काव्य हो या प्रबंधकाव्य जब से हिन्दी साहित्य का व्यवस्थित रुप सामने आया है तब से लेकर आज तक निरंतर रुप से भक्ति एवं अध्यात्म पर कवियों की लेखिनी अविचलित प्रवाहवान रही है, विशेष रुप से मुक्तक छंदों में अध्यात्मिक विषय को लेकर बहुत ही अधिक काव्य रचनाओं का सृजन हुआ है। हिंदी साहित्य का भक्तिकाल ऐसी आध्यात्मिकता के कारण ही साहित्य युग का स्वर्णकाल कहा गया है। आधुनिक काल में भी अध्यात्म एवं भक्ति को समर्पित साहित्य का विपुल प्रमाण में सृजन हुआ है।

अध्यात्म का अर्थ है ब्रह्म की सत्ता के प्रति वैचारिक मंथन जिसमें जीव और ब्रह्म को व्याख्यायित करते हुए भक्ति और दर्शन के विविध आयामों को स्पष्ट किया जाता है। द्वेत-अद्वैत, द्वेताद्वेत, विशिष्टा द्वैत, शुद्धाद्वेत आदि अनेक दृष्टिकोणों से आत्मा और परमात्मा के बीच के अन्तर्रुद्ध आपसी सम्बंधो को व्याख्यायित किया गया है। वस्तुतः अध्यात्मवाद लौकिक धरातल से उठकर अलौकिक क्षितिज में ब्रह्म की खोज करने का एक वैचारिक अभियान है। कबीर दास ने तो कहा भी है कि -

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि ''हैं मैं नांय''

कुछ दार्शनिकों ने स्वयं की सत्ता से हटकर ब्रह्म की सत्ता को विवेचित करने का प्रयास किया है। तो कुछ विचारकों ने मनुष्य में संनिहित ईश्वर की सत्ता को प्रतिष्ठित देखते हैं -

ज्यों तिल माँहि तेल है ज्यों झकमक में आग।
तेरा साईं तुझमें है, जाग सके तो जाग॥

या फिर

कस्तूरी कुण्डलि बसै मृग ढूंढै वन माँय।
ऐसे घट-घट राम हैं दुनियाँ देखे नाँय॥
- कबीर

इस पराशक्ति के प्रति सम्मोहित होकर लौकिक परिवेश से संलग्न आत्मा अपने भौतिक

कष्टों से मुक्ति पाने के लिए ईश्वर के प्रति समर्पित होकर अपनी अनंत आस्था व्यक्त करती है। कोई इस ब्रह्म को राम कहता है तो कोई कृष्ण तो कोई शिव तो कोई शक्ति । राम और कृष्ण की सत्ता को स्वीकारने वाले अध्यात्मवादी दार्शनिक वैषणत्व को मानते हैं। शिव को ब्रह्मत्व में स्थापित करने वाले विचारक शैव कहे गये हैं। तथा शक्ति के आराधक शाक्त माने गये हैं जो विचारक इन अवतारवादी मान्यताओं के पक्ष में नहीं है वे साकारोपासना से हटकर निराकार ब्रह्म के प्रति अपने निर्गुणवादी विचारों को व्यक्त करते हैं।

आधुनिक दोहाकारों ने अधिकांश तो वर्तमान की भौतिक समस्याओं को ही उत्कीर्ण किया है किन्तु स्थान-स्थान पर उन्होंने प्रकारान्तर अपनी अध्यात्मिक स्थापनाओं को रेखांकित किया है-

दोहा साहित्य अपनी आदि परम्परा से लेकर अब तक अध्यात्म की गहन भावनाओं से मंडित रहा है। परमात्मा की असीम कृपा और उनकी महानता का वर्णन काव्य रुप में विशेषतः माननीय और सौन्दर्यमय रहा है, मानव परमात्मा की अनन्य सत्ता का वर्णन अपनी इन्द्रियों के द्वारा सहज पलों में नहीं कर सकता। अतः काव्य को रहस्यमय और गम्भीर बनाकर मार्मिक शब्दों के द्वारा उसे अभिव्यक्त किया जाता है। जिससे विषय सौन्दर्य के साथ-साथ काव्य का सौन्दर्य भी बढ़ता है। क्योंकि कविता में गागर में सागर समा देने की वृत्ति होती है। अतः अध्यात्म की महानता को काव्यमय रुप देकर प्रस्तुत कर दिया जाता है।

सामयिक दोहा साहित्य में धर्म और अध्यात्म से लगभग सभी दोहाकार जुडे हुए हैं क्योंकि जीवन के प्रत्येक क्षण का प्रारम्भ ही इसी विषय के ईर्द-गिर्द होता है। अतः दोहा साहित्य में अध्यात्म को लेकर बहुत गहराई एवं प्रमाण में लिखा गया है। इन दोहों में परमात्मा के प्रति विनय, भक्ति, मन के कोमल भाव, सेवा, अर्चन, कीर्तन, स्मरण, महत्ता, प्रभाव एवं धार्मिक मान्यताओं की अभिव्यक्ति की गई है। कवि ने अपनी श्रद्धा के अनुसार भावाभिव्यति को प्रस्तुत करके काव्य का सृजन किया है।

अध्यात्मिक भावों से जुड़े हुए एवं जीवन को कल्याणकारी बनाने का सहज मार्ग इन दोहों में मिल जाता है। कवि ने अपनी कल्पना शक्ति के आधार पर इस विषय को महिमा मंडित किया है। अभिव्यक्ति और विषय की सौन्दर्यता को लिए हुए दोहा द्रष्टव्य है -

कर्म-मुक्ति के हेतु तज, माया का आधार।
निराकार तब दिखेगा, तज देगा साकार॥[74]

दोहाकार प्रस्तुत दोहे मे संसार की मोह-माया को त्याग देने की बात करता है। वह कहता है कि इस संसार में आकर बार-बार जन्म-मरण के चक्कर से मुक्ति पाने के लिए सांसारिक विषयों को त्यागकर मुक्ति पाने के मार्ग में लग जाना होगा। जब तक हृदय में मोहमाया के प्रति लगाव रहेगा। तब तक सांसारिक दुःखों का भोग करना पडेगा, अतः इस भौतिक मोहमाया को त्यागकर ही जीवन को सफल बनाया जा सकताहै। क्योंकि जब तक आत्मा, सांसारिक प्रलोभनों में, उसके आकार, प्रकार और मोह में लिप्त रहेगी तब तक उसे परम् ब्रह्म का अहसास कदापि नहीं हो सकता। दोहाकार कहता है कि यदि आत्मा को निराकार ब्रह्म की अनुभूति करनी है तो उसे सांसारिक साकार प्रलोभनों से अपने आप को विमुख करना होगा तभी निराकार परमात्मा का अनुभव किया जा सकता है।

प्रस्तुत दोहे में दोहाकार ने साकार और निराकार दोनों ही शब्दों की महत्ता को अपनी-अपनी जगह पर स्थापित किया है। परमात्मा स्वयं में तो निराकार है परन्तु उसकी माया साकार रुप में इंद्रिय ग्राह्य है। अतः आत्मा साकार के उपभोग में निराकार को अनुभव नहीं करती। अतः दोहाकार विषय वासना में लिप्त सांसारिक चकाचौंध को त्यागने की बात करता है। यदि दूसरी एक दृष्टि से देखा जाय तो यहाँ पर दोहाकार योग-साधना की भी बात करता है। जहाँ आत्मा और परमात्मा दोनों एकाकार हो जाते हैं। जहाँ भौतिक संसार कुछ भी दिखायी नहीं देता। इस तरह से काव्य में दार्शनिक मतों का उल्लेख प्रत्येक काल में किया गया है। यदि यह संसार है तो संसार को चलाने वाला भी कोई है। जिसको लेकर कवियों ने अपनी अपनी अनुभूतियों के अनुसार श्रद्धा प्रकट की है। अध्यात्म से जुडे हुए अनेकानेक प्रसंगों, मतों, चिन्तन आदि को काव्य के द्वारा प्रस्तुत किया गया है। आधुनिक दोहाकारों ने भी इस परम्परित विषय को जिस प्रकार से आज के सामयिक वातावरण में अनुभवित किया है उसी प्रकार से काव्य में भी उसकी अभिव्यक्ति की है। आज आधुनिकता की होड़ में भागते हुए मानव जीवन में अध्यात्मिक और दार्शनिक विचार कहाँ तक, एवं किस प्रकार के हैं इन पर भी सामयिक दोहा साहित्य में काफी कुछ लिखा गया है जो सृजन की एक नई अनुभूति को प्रस्तुत करते हैं। जिनका अपना एक अनोखा सौन्दर्य भी है। सामयिक दोहाकारों द्वारा सृजित कुछ दोहे द्रष्टव्य हैं जिनमें अध्यात्मिक, दार्शनिक विचार धारा का सौन्दर्यमयी अनुभव किया जा सकता है -

जन्म नहीं अनुभूति का, बिना भाव-अनुभाव।
गुणातीत भी है नहीं, यदि है शून्य-अभाव ।।[75]

अविकारी अविचल अमल, व्यापक ब्रह्म अनन्य।
जिस प्राणी ने पा लिया, उसका जीवन धन्य॥(76)

जुड़ा न जब तक जीव का ईश्वर से सम्बन्ध।
दूर न तब तक हो सकी दुनियाँ की दुर्गन्ध॥(77)

राम-श्याम-शिव एक हैं, युग-युग शक्ति अपार।
किसी रुप में देख लो, होगा बेड़ा पार॥(78)

मनोवेगों का सौन्दर्य

कविता में सभी भाव हमारे आन्तरिक मनोविकारों से उद्भवित होते हैं। मन के विकारों से जनित भाव विभिन्न राग और विकारों से सुसज्जित होकर सरल और सम्प्रेषित रुप में जब कविता के माध्यम से व्यक्त होते हैं। तो रसज्ञ पाठक या श्रोता सम्मोहित अवस्था को प्राप्त होता है। दोहा छंद मे इन मनोवेगों का प्रदर्शन मध्यकाल से ही होता आया है। बिहारी सतसई में अनेक दोहे इन वेगों को उद्घाटित करते हैं। उनका एक दोहा द्रष्टव्य है -

गुडी उड़ी लखि लाल की, अँगना अँगना माँहि।
बौरी लौ दौरी फिरै, छुअत छबीली छाँहि॥

अर्थात नायक की पतंग उड़ रही है। नायिका उसका अवलोकन कर रही है। उस पतंग की छाया उस नायिका के आँगन में पड़ रही है। वह नायिका उस छाया का स्पर्श करने के लिए पागल बनकर उसके आगे पीछे दौड़ रही है। यहाँ कवि ने नायक की पतंग की प्रतिछाया के स्पर्श के माध्यम से परोक्ष रुप में जैसे नायक के ही प्रत्यक्ष स्पर्श की अनुभूति का रोमांचित अनुभव करने के लिए व्यग्र नायिका की उद्वेगावस्था को व्यक्त किया है। अर्थात् नायिका उस पतंग की प्रतिछाया का स्पर्श करके जैसे स्वयं नायक के स्पर्श का अनुभव करना चाहती है। इस मनोवेग की सूक्ष्माभिव्यक्ति इस दोहे में व्यक्त हुई है।

आधुनिक दोहाकारों ने भी इसी प्रकार के मनोवेगों को बड़े ही प्रभावक ढंग से व्यक्त किया है।

अंग-अंग कसमस हुए, कर फागुन की याद।
आँखों में छपने लगे, मन के फिर अनुवाद॥(79)

किया है। जीवन के किसी विशेष क्षण, किसी विशेष परिस्थिति अथवा अनुभव को अत्यन्त सघन, संवेद्य बनाकर कवि मन के उद्वेगों को इस प्रकार प्रस्तुत करता है जिसमें दोहे की परम्परित गरिमा के साथ सौन्दर्यवादी अभिगम भी निरन्तर बना रहता है।

परोक्ष कथ्यों का सौन्दर्य

प्रमुखतः काव्य के दो पक्ष माने गये हैं। एक तो प्रत्यक्ष और दूसरा परोक्ष। इन दोनो पक्षों के बीच काव्य का सृजन होता है। वैसे तो काव्य में प्रत्यक्ष की अपेक्षा परोक्ष पर अधिक बल दिया गया है। कुशल कवि विभिन्न बिम्बों और प्रतीकों के द्वारा काव्य में कथ्यों को प्रस्तुत करता है। इस प्रस्तुतिकरण में एक तो काव्य का स्वभाविक या प्रत्यक्ष सौन्दर्य होता है और दूसरा वह जो अप्रत्यक्ष रुप से कवि कहना चाहता है।

काव्य के परोक्ष पक्ष को उद्घाटित करने के लिए ध्वनि का भी सहारा लिया जाता है। वैसे भी सीधे साधे अर्थ को प्रस्तुत करने वाला पक्ष अच्छा काव्य नहीं कहलाता, काव्य में गूढ अर्थ का छिपा होना अति आवश्यक है। जिसे परोक्ष कथ्य कहते हैं। यदी गूढ अर्थ काव्य में परोक्ष कथ्य के सौन्दर्य को उजागर करता है। काव्य में जो कहा जाता है उसका उतना महत्व नहीं जितना उसके अभिप्राय से, यह अभिप्राय ध्वनि में रहता है। जैसे - ''राम जब जटायु से कहते हैं कि मेरे पिता को सीता हरण की घटना मत कहना वह तो रावण ही कुल सहित जाकर सुनायेगा।'' यदि राम के इस कथन का परोक्ष कथ्य लिया जाय तो अभिप्राय होगा कि ''रावण ने सीता का जो अपहरण किया है उसके कारण मैं उसके पूरे कुल का नाश करुंगा।'' अतः प्रस्तुत उदाहरण से हम देख सकते हैं कि काव्य में परोक्ष अर्थ का अपना विशेष महत्व है। प्रत्येक काव्य कथन में कुछ न कुछ अप्रत्यदन सामयिक अर्थ छिपा ही होता है, ऐसे परोक्ष कथ्यों के सौन्दर्य को सामयिक दोहा साहित्य में भी सहजता से देखा जा सकता है। जहाँ दोहाकार व्यंग्य के माध्यम से अपने भावों को अप्रत्यक्ष रुप से प्रस्तुत करता है। उदाहरण द्रष्टव्य है -

उसका है ये वायदा, जीता अगर चुनाव।
पानी पर तैराएगा, वो पत्थर की नाव।।[85]

प्रस्तुत दोहे में पानी के ऊपर पत्थर की नाव तैराने की वात की गई है। वैसे तो यह असम्भव है परन्तु फिर भी नेताजी असम्भव को सम्भव बनाने की बात करते है पत्थर की नाव पानी पर तैराना अर्थात असम्भव को सम्भव बनाना है। नेताजी की बात का यदि प्रत्यक्ष अर्थ ग्रहण किया जाय तो हास्यास्पद लगता है। परन्तु उनके कथ्य के परोक्ष अर्थ पर यदि विचार करें तो स्पष्ट

हो जाता है कि नेताजी वे सभी असम्भव कामों को सम्भव कर देने की बात करते हैं। जो अब तक किसी ने नहीं कर पाये। इस प्रकार दोहा के परोक्ष कथ्य में चमत्कार भी है और सौन्दर्य भी, इसी प्रकार दोहाकार एक अन्य दोहे में कहता है कि -

ले-देकर बस एक था, घर में यही गिलास।
वह भी चटखा एकतम, बिल्कुल मुँह के पास।।(86)

दोहाकार ने प्रस्तुत दोहे में प्रत्यक्ष रुप से किसी अभाव ग्रस्थ के करुण भावों को व्यक्त किया जिसके पास कुल मिलाकर यही एक गिलास था जो चटखकर टूटने की स्थिति में हो गया है। वह भी ऐसे समय में कि जब उसका सलामत रहना आवश्यक था वह तृप्ति देने ही वाला था। दोहाकार ने प्रस्तुत दोहे में जीवन के सहज बिम्ब को सामने रखते हुए अपने भावों को अभिव्यक्त किया है। जिसमें प्रत्यक्ष की अपेक्षा परोक्ष कथ्य अधिक महत्व रखता है। अभावग्रस्त जीवन में जिसमें संभालकर रखा और जिस पर ही जीवन का विश्वास टिका हुआ था जो जीवन को सुख देने वाला था उसने भी जरुरत के समय पर ही साथ छोड़ दिया। दोहाकार प्रस्तुत दोहा के माध्यम से जीवन के एक करुण क्षण को व्यक्त करता है जिसमें मानव के क्षुब्ध हृदय की विवसता प्रतिबिम्बित होती है।

काव्य की सार्थकता तभी सिद्ध होती है। जब उसमें रहस्यमय अभिव्यक्ति मिलती है। अतः कविता को इसलिए भी कठिन समझा जाता है कि उसमें अर्थ की व्यापकता का अनुमान लगाना सरल नहीं है और अर्थ को व्याख्यायित करना हर किसी के बस में नहीं है।

सामयिक दोहा में भी काव्य के सभी गुण विद्यमान है। अतः काव्य के सभी आयामों के द्वारा उसका सौन्दर्य भी बढ़ता है। जीवन की अनेक रुपताओं को, विविधताओं को प्रस्तुत करते दोहे द्रष्टव्य है जिनमें प्रत्यक्ष सौन्दर्य के साथ-साथ परोक्ष कथ्य के सौन्दर्य को भी देखा जा सकता है -

हुई हवाएँ भ्रष्ट सब, हर घटना बीमार।
बेच रही सूरज नये, अंधों की सरकार।।(87)

फूल जहाँ करते सदा, आपस में सहयोग।
उसी महकते बाग को, गुलशन कहते लोग।।(88)

अपनी छतरी साथ रख, घर से चलते वक्त।
मरुथल में मिलते नहीं, छाया दार दरख्त।।(89)

जब भी आँधी है चली, टूटे ऊँचे पेंड़।
रहे सुरक्षित तृण झुके, लता सहमती मेड़।।(90)

अलंकारिक सौन्दर्य

कविता में अलंकारों की आवश्यकता पर अत्यधिक बल दिया गया है। काव्य को सौन्दर्यमयी बनाने में अलंकारों का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। भारतीय काव्य शास्त्र में स्वयं आचार्य दण्डी ने कहा है कि - ''काव्यशोभा करान् धर्मान अलंकारान् प्रपच्छते'' अर्थात काव्य की शोभा बढाने वाले तत्व को अलंकार कहते हैं। जब से काव्य का व्यवस्थित रुप सामने आया है तब से रचनाकार अनेक अलंकारों का प्रयोग अपने काव्य में करते रहे हैं। काव्य शास्त्र में अलंकारवादी आचार्यो के मतानुसार - 'अलंकार के बिना काव्य विधवा के समान है, अलंकार रहिता विधवैय सरस्वती।' अर्थात् काव्य का सही श्रृंगार अलंकार के ही द्वारा होता है।

आचार्य केशव भी काव्य की सुन्दरता के लिए अलंकार को विशेष महत्व देते हैं। उन्होंने अपने एक दोहे में अलंकार की महत्ता बताते हुए कहा है कि -

जद्पि सुजात सुलक्षिनी सुबरनि सरस सुवृत्त।
भूषंत बिनु न सुहावती कविता बनता मित्त।।(91)

कविता में चमत्कार प्रदर्शन करना कवियों का परम्परित विषय रहा है और साहित्य में केशवदास जैसे महान कवि रहे हैं जिन्होंने अलंकारों के प्रयोग से पूरे काव्य जगत को चमत्कृत कर दिया है। अलंकार प्रयोग से एक-एक शब्द के विभिन्न अर्थ निकालकर काव्य में सौन्दर्य का संचार होता रहा है जैसे रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि एवं दोहाकार बिहारीलाल ने कनक-कनक शब्द को दो अर्थो में बाँटकर उसके सटीक प्रभाव को भी व्यक्त किया है। जहाँ उन्होने यमक अलंकार की पूर्ति कर एक सामान्य कथ्य को प्रभावशाली बना दिया है -

कनक-कनक तै सौ गुनी, मादकता अधिकाय।
या खाये बौराय नर, वा पाये बौराय।।(92)

काव्य को सौन्दर्यमय बनानेवाले अनेक यामों में अलंकार को श्रेष्ठ मान सकते हैं। यह रचनाकार की सक्षमता एवं काव्य सृजन के कौशल पर निर्भर करता है। काव्य में अलंकार का प्रयोग काव्य शास्त्रीय नियमों में बँधा हुआ होता है। अतः यहाँ कवि की सक्षमता पर काव्य का सौन्दर्य टिका हुआ होता है। विभिन्न अलग-अलग अलंकारों के प्रयोग से काव्य में सौन्दर्य बढता है। दोहा साहित्य

खान-पान देख लेती है। तो सभी चीटियाँ मिलकर उसी खान-पान सामग्री पर टूट पडती है। उस वक्त उन्हे और कुछ भी नजर नहीं आता उस पर अपना अधिकार जमा लेती हैं। इसी प्रकार नेता अपनी भूख मिटाने के लिए अर्थात भौतिक जीवन के सुखों को प्राप्त करने के लिए कुर्सी पर लपकते हैं क्योंकि सत्ता की कुर्सी ही उनके लिए वह डौल है जो उन्हें सभी सुविधाओं और सुखों की प्राप्ति करवा सकती है।

दोहाकार ने चींटी बौना डौल आदि शब्दों के माध्यम से अपने कथ्य को प्रस्तुत किया है। सत्ता की कुर्सी अर्थात नेतृत्व बहुत ही बड़ी जिम्मेदारी है। सारे देश समाज की व्यवस्थाएं उसी पर निर्भर हैं। किन्तु कुछ औने बौने लोग जो उस सत्ता की कुर्सी के लायक भी नहीं है। वे भी कुर्सी के आकार का ख्याल न रखते हुए उस पर बैठने को लपकते हैं जैसे चींटियाँ खाद्य पदार्थ पर एक साथ टूट पड़ती हैं। बैसे ही ये राजनेता कुर्सी के लिए टूटते हैं । इस प्रकार से दोहाकार ने अलंकार के माध्यम से कथ्य को अभिव्यक्त करने के साथ उसमें सौन्दर्य का भी अद्भूत संचार किया है। जो समसामयिक राजनीतिक परिवेश को उजागर करता है। इसी प्रकार से अलंकारों की गरिमा से युक्त व सौन्दर्य की छवि दे रहे कुछ और दोहे द्रष्टव्य हैं जिनमें अलंकारों की शोभा प्रदर्शित होती है -

मन पर मन भर बोझ है, गूँगे लगते शब्द।
व्यथा-कथा लिखनी कठिन थोडे हैं शत-शब्द ।।[94]

दबे पाँव इस बाग में, घूमें-फिरें जनाब।
कलियाँ कच्ची नींद में देख रहीं है ख्वाब ।।[95]

कर दी मस्त बहार ने पूरी मिलन-मुराद।
कली-कली शीरी हुई भ्रमर-भ्रमर फरहाद ।।[96]

पीड़ा की मन्दाकिनी, अभिलाषा की नाव।
ढायें तो कब तक भला, मन के बोझिल चाव ।।[97]

प्रतीक एवं बिम्ब योजना का सौन्दर्य

साहित्य में चित्रात्मकता तथा दृश्यांकन को काव्य का एक महत्वपूर्ण गुण मानकर जिस साहित्यिक आन्दोलन का उदय हुआ उसे विम्बवाद के नाम से पहचाना गया। किसी पदार्थ का मानसिक चित्त ही बिम्ब है, किसी वस्तु अथवा पदार्थ का स्थूल या सूक्ष्म चित्रण ही विम्ब की संज्ञा

हो जाता है। यह लाल रंग अनुराग का अर्थात प्रेम का प्रतीक है। कवि कहता है कि आकाश में धीरे-धीरे अंधकार छाने लगा है और चन्द्रमा पर सूर्य की किरणें पड़ने लगीं है । जिससे चन्द्रमा में भी चमक आ गयी है और संध्याकाल में सूर्यास्त का लालामी वातावरण फैला हुआ है। कवि को यह द्रश्य ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई नई नवेली दुल्हन अपने पति को देख अनुरागी रंग में रंग गई हो। अर्थात् उसका मुख शरम से लाल हो गया हो, कवि ने यहां चन्द्रमा संध्या आदि प्राकृतिक बिम्बों के द्वारा अपने कथ्य को प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार से दोहाकार एक अन्य दोहे में भी प्रतीक के एक और माध्यम को प्रस्तुत करता है-

आँखों में मदिरा लिये होंठ रचाये पान।
गली-गली में घूमता, फागुन सीना तान।।(99)

प्रस्तुत दोहे में कवि ने ''आँखों में मदिरा'' और होंठ रचाये पान जैसे शब्दों का उल्लेख किया है। यहाँ आँखों की मदिरा असंतुलन का प्रतीक है और होंठ पर रचा हुआ पान, अर्थात लाल होंठ, प्रेम के अहसास का प्रतीक है। यहाँ पर प्रस्तुत दोहे में कवि फागुन के मद-मस्त महीने का उल्लेख करता है। इस महीने में चारों ओर मौज मस्ती का आलम होता है ऐसे में दिल के अरमानों पर काबू रख पाना मुश्किल होता है और फागुन सीना तान कर घूम रहा है। यह सीना तान कर घूमना निडरता का प्रतीक है। यहाँ पर कवि ने पूरा कथ्य बड़े ही सुन्दर और सटीक शब्दों के द्वारा प्रस्तुत किया है। जिसमें प्रतीक और बिम्बों का प्रयोग सहज ही होता हुआ दिखाई देता है। जिससे दोहा में सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। इसी प्रकार के कुछ और दोहे द्रष्टव्य हैं जो कवि की कुशल सृजन क्षमता को भी प्रस्तुत करते हैं।

नयन बने डल झील-से, केसर बना शरीर।
तुम्हें देख ऐसा लगा, देख लिया कश्मीर।।(100)

लिये अजन्ता-सा हृदय, खजुराहों-सी देह।
मौसम के अनुरोध-सी, आयी सजनी गेह।।(101)

हाथों में मेंहदी रची रंग हुए बाचाल।
फिर ललछौंही देह को छूने लगे गुलाल।।(102)

रस सौन्दर्य

भारतीय समीक्षा पद्धति में 'रस' को अप्रतिम महत्व मिला है। कुछ आचार्यो ने तो रस

को काव्य की आत्मा तक माना है। और रस को ''ब्रह्मानंद सहोदर'' कहा गया है। आचार्य विश्वनाथ ने ''वाक्यं रसात्मकम् काव्यम्।'' कहकर रस युक्त वाक्य को काव्य कहा है। रस में जहाँ अपना पराया सब कुछ विस्मृत हो जाता है उस अपरिमित भावोन्मेष को ही रस दशा कहा गया है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने ''हृदय की मुग्धावस्था को रस दशा कहा है''। मनुष्य जब रस दशा को प्राप्त होता है तो उसे एक अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है। कविता में शब्दों का समूह ही पर्याप्त नहीं है परन्तु हृदय स्पर्शी चमत्कार ही किसी रचना को काव्य की गरिमा प्रदान करता है। ऐसा चमत्कार ही रस है - रसे सारः चमत्कार। अर्थात् रस का सार चमत्कार है।

भारतीय काव्य शास्त्र में मुख्य रुप से कुल ग्यारह प्रकार के रस माने गये हैं। इन रसों मे - शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बिभत्स, अद्भूत, और शान्त रस हैं। इनके अलावा वात्सल्य और भक्ति को भी रस की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार कुल मिलाकर ग्यारह रस माने गये हैं। जिन उपादानों अथवा साधनों से रस की उत्पत्ति होती है। उन्हे रस के अंग या अवयव कहा जाता है। भरत मुनि ने अपने ''रससूत्र'' में रस के अवयवों की चर्चा भी की है - ''विभावानुभाव संचारि संयोगाद्रस निष्पत्ति।'' इस प्रकार किसी काव्य का महत्वपूर्ण होना रस पर भी निर्भर है। काव्य के रसास्वादन से ही आनंद की प्राप्ति होती है।

काव्य को सौन्दर्यमय बनाने वाले उपकरणों में रस की भूमिका मुख्य हैं। बिना रस के काव्य से न ही पाठक संतुष्ट होता है और न ही स्रोता अर्थात निःरस काव्य कोई भी चमत्कार प्रदर्शन नहीं कर पाता और वह शीघ्र ही विस्मृत हो जाता है। दोहा छंद अपने आदि से ही विभिन्न रसों में लिप्त होकर अवतरित होता रहा है।

इसलिए आज भी साहित्य जगत में अपना एक विशिष्ट स्थान बनाये हुए हैं। भक्ति, शृंगार, वीर, आदि रसों में लिप्त दोहे आज भी विस्मरणीय हैं ।

सामयिक विषयों से जुडे हुए आधुनिक साठोत्तरी दोहे मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर करते हैं जिनमें दोहाकार विभिन्न कथ्यों को अलग-अलग दृष्टि से प्रस्तुत करता है। इन दोहों में रस का सौन्दर्य विषय सापेक्ष प्रस्तुत हुआ है। आज का दोहा मुख्यतः व्यंग्य के माध्यम से कथ्य को प्रस्तुत करता है। फिर जहाँ जैसे विचारों को कवि ने प्रस्तुत किया वहाँ वैसा ही रस निश्रित हुआ है। शृंगार रस से सरावोह दोहा द्रष्टव्य है -

गोरी-नर्म हथेलियाँ उनमें जगमग दीप।
मोती को थामे हुए खुली हुई ज्यों सीप।।[103]

यहाँ पर कवि ने नायिका का सम्पूर्ण शृंगारिक वर्णन न करके मात्र उसकी सौन्दर्यमयी हथेलियों का वर्णन किया है। शृंगार और सौन्दर्य वर्णन की परम्परा में भी कवियों ने आँखें, भृकुटि, होंठ, केश आदि जैसे शारीरिक उपांगों को माध्यम बनाकर सौन्दर्य का वर्णन किया है। प्रस्तुत दोहे में भी दोहाकार नायिका की गोरी और नर्म हथेलियों के सौन्दर्य को उजागर करता है। कवि कहता है कि नायिका की गोरी-नर्म हथेली में रखा हुआ जगमगाता दीप ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो स्वच्छ सफेद सीप खुली हुई है और उसमें सफेद चमचमाता मोती रखा हुआ है। अर्थात नायिका की हथेलियाँ सीप के समान स्वच्छ और सुन्दर है और न हथेलियों में रखा हुआ दीप मोती जैसा प्रतीत हो रहा है। प्रस्तुत दोहे में दोहाकार ने नायिका की गोरी हथेलियों का श्रृंगारिक वर्णन किया है। इसी प्रकार दोहाकार एक अन्य दोहे में कहता है कि -

प्रियतम नयनों में बसें, हों जब पलकें बंद।
जैसे मोती सीप में कलियों में मकरंद॥

इस प्रकार अन्य विभिन्न रसों को उत्पन्न करते हुए कुछ दोहे दृष्टव्य हैं।

करुणा, दया जैसे मानवीय हृदय से निश्रित भावों को माध्यम बनाकर दोहाकार ने कहा है कि -

सहते मन की ही नहीं तन की भी हम मार।
एक पेट ने कर दिया, हमें बहुत लाचार॥[106]

इसी प्रकार एक अन्य दोहे में दोहाकार एक ही व्यक्ति के अनेक रुपों के दर्शन भी करवाता है। आज का मानव जहाँ दोहरी ही नहीं बल्कि न जाने कितने रुपों से अपनी पहचान बनाए हुए हैं। इसी परिपेक्ष्य में दोहाकार अद्‌भूत रस का संचार करते हुए कहता है -

सेवक, तस्कर, माफिया, व्यापारी श्री मंत।
सभी एक ही व्यक्ति में, आज हुए जीवंत॥[107]

इसी प्रकार वीर रस को प्रस्तुत करता हुआ दोहा द्रष्टव्य है -

उग जाते हैं तोड़कर, जो कठोर चट्टान।
उन्हे झुका पाया भला, कब कोई तूफान॥[108]

और

सदा शूर ही झेलते हैं छाती पर वार।
आलू-बेंगन पर नहीं, गिरी कभी तलवार॥

इस प्रकार सामयिक दृष्टिकोण को सामने रखकर लिखे गये साठोत्तरी दोहे रस निष्पत्ति में उतने तो मार्मिक नहीं है जितने मध्यकाल में हुए हैं। फिर इन सामयिक दोहों को अपना निजी आकर्षण रहा है। शृंगार की अभिव्यंजना को प्रसारित करता हुआ निम्न दोहा आकर्षक बन पड़ा है -

रही न सुध-बुध भी तनिक, हुए नयन जब चार।
जादू-सा मुझ पर करे यह तेरा दीदार॥

कविता में शांत रस की प्रस्तुति के विषय में कवियों का मानना है कि समत्वबोध से ही शांति सम्भव है और शांति में ही ईश्वर की पद् चाप सुनाई पड़ती है। शान्त रस के सौन्दर्य को निम्न दोहे में देख सकते हैं -

जुडा न जब तक जीव का ईश्वर से सम्बंध।
दूर न तब तक हो सकी, दुनियाँ की दुर्गंध॥

इसी प्रकार भक्ति रस युक्त दोहा द्रष्टव्य है -

ओला सागर में गिरा, गलकर हुआ विलीन।
बिन्दु समाया सिन्धु में दीनबन्धु में दीन॥

भाषा का सौन्दर्य

भाषा सम्प्रेषण का वह माध्यम है जिसके द्वारा हम आपसी भावों को प्रकट करते हैं। अर्थात विचारों की सार्थक अभिव्यक्ति को भाषा कहा जाता है या फिर हम यूँ भी कह सकते हैं कि मनुष्य के विचारों को जिस माध्यम से दूसरे के लिए स्पष्ट किया जाता है। उस ध्वनि संयोजन का नाम भाषा है।

साहित्य में अनेक भाषाएं आयीं और गयीं। परन्तु उनका कार्य मात्र भावाभिव्यक्ति को प्रस्तुत करना रहा है। वैदिक संस्कृत से लेकर खड़ी बोली तक साहित्य में अनेक भाषाओं ने योगदान दिया है। अनेक रचनाकारों ने पृथक-पृथक भाषाओं को अपनाकर भाषायी सौन्दर्य को भी प्रस्तुत किया है। काव्य भाषा के रुप में ब्रजभाषा की प्रतिष्ठा उच्च रही है। परन्तु हिन्दी साहित्य के कालों में पृथक-पृथक भाषाओं का वर्चस्व रहा है, आधुनिक काल में खड़ी बोली हिन्दी की प्रतिष्ठा हुई है। अतः काव्य भाषा और गद्य भाषा दोनों में ही खडी बोली का प्रयोग होता है।

भाषा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्तित्व की पहचान होती है। मनुष्य पर सबसे पहला प्रभाव भाषा का ही होता है। अतः शिष्ट सौन्दर्यमय और प्रभावी भाषा सभी को अच्छी लगती है और यह अच्छा लगना ही सौन्दर्य को प्रकट करता है।

दोहा लोकभाषा का सबसे प्यारा छंद है। अतः इसमें लोकभाषा का अपना एक निजी सौन्दर्य भी रहा है। अतः कथ्य को प्रस्तुत करने के लिए दोहाकारों ने विभिन्न लोकभाषाओं को अपनाया है। लोकाग्रही होने के कारण साहित्य में इस छंद का प्रयोग सर्वत्र देखने को मिलता है। बिहारी लाल जैसे सशक्त दोहाकार ने इस छंद में ब्रजभाषा का प्रयोग करके दोहा सतसई की रचना की जिसका एक-एक दोहा बिहारी के कल्पना की समाहार शक्ति और भाषा की समासिकता का परिचय देता है जिससे दोहा छंद का अप्रतिम सौन्दर्य निखर कर उजागर हुआ है।

संस्कृत, तत्सम, तद्भव देशज, विदेशी आदि अनेक भाषा और उपभाषा के शब्द दोहों में मिल जाते हैं। दोहाकारों ने जहाँ पर जैसा चमत्कार उत्पन्न करना चाहा है वहाँ पर उसी प्रकार के भावों को इन शब्दों के माध्यम से प्रस्तुत किया है जिनमें भाषा का सौन्दर्य स्पष्ट उद्घाटित होता है -

संस्कृत भाषा की शिष्टता व कथ्य को, सौन्दर्यमयी बनाने वाले सुसंस्कृत निष्ट शब्द निम्न दोहे में द्रष्टिगोचित होते हैं -

कार्य सदा होता रहा, कारण के अनुरुप।
नृपति विदूषक बन गये, बने बिदूषक भूप।।[109]

यहाँ प्रस्तुत दोहे में कार्य, नृपति, विदूषक, भूप आदि संस्कृत भाषा के शब्दों का प्रयोग दोहे के कथ्य को और भी सौन्दर्यमय रुप देकर प्रस्तुत करते हैं। कवि मात्र कार्य और कारण की बात को लेकर भावों को प्रस्तुत कर रहा है। मगर राजा का हास्यास्पद व्यक्तित्व बना देना और व्यंग्य के माध्यम से सामयिक राजनीतिक परिवेश और परिस्थिति पर प्रहार करना। इस दोहा का दृष्टिकोण है। इसी प्रकार से एक अन्य दोहे में दोहाकार फिल्म जगत से जुडे हुए अंग्रेजी शब्द 'थियेटर' का प्रयोग करके भावों को व्यक्त करता है -

दिखे थियेटर की तरह, शासन का सुख भोग।
उच्चासन पर बैठते, जहाँ तुच्छतम लोग।।

प्रस्तुत दोहे में स्पष्टतः भाषायी सौन्दर्य को देखाजा सकता है जिसमें अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत भाषाओं की शब्दावली प्रयुक्त हुई है।

सन् साठ के बाद काव्य भाषा के रुप में खड़ी बोली हिन्दी को प्रतिष्ठा मिली है। अतः सामयिक इन दोहों की काव्य भाषा भी खड़ी बोली हिन्दी ही है। मगर दोहाकारों ने अभिव्यक्ति की प्रस्तुति में अन्यान्य भाषाओं का भी उपयोग किया है। इन अन्यान्य भाषाओं की शब्दावली इन

दोहों में सहज ही प्राप्त हो जाती है -

बोये, सींचे कौन अब, मेहनत किसे कबूल।
अब घर-घर में सज रहे, बस काग़ज़ के फूल॥(111)

इसी प्रकार

परिवर्तित होते रहे, जीवन के सब ठाठ।
हरा-भरा तो वृक्ष है, सूख जाये तो काठ॥(112)

भाषा ही दोहा का शरीर है यदि शरीर में सुन्दरता होगी तो प्रथम दृष्टि में ही सुन्दरता का अहसास हो जाता है। अर्थात् मनुष्य के मन मस्तिष्क पर शारीरिक सुन्दरता का प्रभाव पहले पडता है। यहाँ भी दोहा का सरीर उसकी भाषा है एक सक्षम और सशक्त काव्यकार भाषा के सटीक शब्दों के द्वारा भी काव्य को सजाता सँवारता है। दोहा छंद लघु वर्णीय होने से गागर में सागर भरने की वृत्ति यहाँ अपना प्रभाव अधिक दिखाती है, भाषा के द्वारा कवि सहृदय पाठक और श्रोताओं पर चमत्कार पूर्ण प्रभाव बनाता है। अतः काव्य में भाषा का सौन्दर्य विशेषतः प्रभावी होता है। सामयि दोहा साहित्य में दोहाकारों ने भाषाओं के विविध शब्दों का प्रयोग करके सौन्दर्य के एक नव्य आयाम को प्रस्तुत किया है। इस प्रकार कविता में सौन्दर्य की पूर्ति करनेवाले ऐसे अनेक आयाम हैं जिनसे काव्य का सौन्दर्य उद्घाटित होता है। व्यवहारिक दृष्टि से यह भी सत्य है कि सौन्दर्य के बिना कविता की प्रभाविकता कम हो जाती है। अतः कविता में सौन्दर्य का अपना विशिष्ट स्थान है। यहाँ पर हमने काव्य में निरुपित होने वाले सौन्दर्य के विविध आयामों पर चर्चा की है। काव्य में सौन्दर्य की अभिवृद्ध करने वाले इन आयामों को, दोहा में भी प्रस्तुति मिली है। जिनके द्वारा दोहा का सौन्दर्यवादी अभिगम निखर कर सामने आया है।

सामयिक परिवेश से जुडे हुए ये दोहे प्रमुखतः तो मावन जीवन की विविधताओं को प्रस्तुत करते हैं। इन दोहों में सौन्दर्य लानेवाले काव्य शास्त्रीय प्रयोजनों पर अधिक बल नहीं दिया गया है। इन दोहों का अपना स्वभाविक सौन्दर्य ही प्रकट हुआ है। कहीं पर भी सौन्दर्य लाने का आरोपित प्रयास नहीं हुआ है। फिर भी सौन्दर्य के विविध आयाम सराहनीय और प्रशंसनीय हैं।

संदर्भ सूची

1) प्रगतिशील कविता में सौंदर्य चिंतन, डॉ. तनुजा तिवारी, पृष्ठ 11

2) वही '' '' '', पृष्ठ 9-10

3) समकालीन कविता और सौन्दर्य बोध, रोहिताश्व, पृष्ठ 111

4) वही '' '' '', पृष्ठ 112

5) सप्तपदी-1, सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' (दोहा संकलन), दोहाकार : विश्वप्रकाश दीक्षित 'बटुक', दो. 53

6) वही '' '' '', दो. 65

7) वही - दोहाकार : कुमार रवीन्द्र, दो.1

8) वही '' '' '', दो. 5

9) प्रगतिशील कविता में सौन्दर्य चिन्तन, डॉ. तनुजा तिवारी, पृष्ठ 53

10) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' - दोहाकार कृष्णेश्वर डींगर, दो.22

11) वही '' '' '', दो. 25

12) भक्ति रसामृतसिंधु, रुप गोस्वामी, पृष्ठ 133

13) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन) सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र' - दोहाकारः माहेश्वर तिवारी, दो.46

14) वही '' '' '', दो. 53

15) प्रगतिशील कविता में सौन्दर्य चिंतन, डॉ. तनुजा तिवारी, पृष्ठ 9-10

16) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', दोहाकार : वेद प्रकाश पाण्डेय दो.48

17) '' '' '' '' कैलाश गौतम, दो.29

18) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन), सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', दोहाकार : विश्वप्रकाश दीक्षित, दो.65

19) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), दोहाकार श्रीकृष्ण शर्मा, दो.29

20) वही '' '' '' उर्मिलेश, दो.22

21) कोने खुली किताब (दोहा संग्रह), शैल रस्तोगी, दो.18

22) नावक के तीर (दोहा संग्रह), अनंतराम मिश्र 'अनन्त', दो. 295

23) जैसे (दोहा संग्रह), हरेराम 'समीप', दो. 374

24) कोने खुली किताब (दोहा संग्रह), शैल रस्तोगी, दो.76

25) जैसे (दोहा संग्रह), हरेराम 'समीप', दो.248

26) नावक के तीर (दोहा संग्रह), अनंतराम मिश्र 'अनन्त', दो. 266

27) बोलो मेरे राम (दोहा संग्रह), राम निवास मानव, दो. 243

28) सारांश (दोहा संग्रह), रामेश्वर हरिद, पृष्ठ 50

29) हम जंगल के फूल (दोहा सतसई), ब्रजकिशोर वर्मा ''शैदी'', दो. 478

30) सप्तपदी-5 (दोहा संलकन), आचार्य भगवत दुबे, दो.61

31) वही '' '' '', उर्मिलेश, दो.9

32) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), सं. अशोक अंजुम, दोहाकारः रामानुज त्रिपाठी, दो.58

33) हम जंगल के फूल (दोहा संग्रह), ब्रज किशोर वर्मा 'शैदी', दो.427

34) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), माहेश्वर तिवारी, दो.45

35) वही '' कैलाश गौतम, दो.2

36) वही '' कृष्णेश्वर डींगर, दो.75

37) 'जैसे' (दोहा संग्रह), हरेराम 'समीप', दो.76

38) विराट सतसई (दोहा सतसई) विष्णु विराट, दो.55

39) सप्तपदी-6 (दोहा संकलन), दोहाकार - कैलाश गौतम, दो.1

40) बटुक की कटुक सतसई (दोहा संग्रह), विश्वप्रकाश दीक्षित, 'बटुक', दो.371

41) 'नावक के तीर' (दोहा संग्रह), अनंतराम मिश्र 'अनन्त', दो.45

42) वही '' '' '', दो. 439

43) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), सं. अशोक 'अंजुम', दोहाकार : अनंतराम मिश्र 'अनन्त', दो.58

44) बोलो मेरे राम (दोहा संग्रह), रामनिवास मानव, दो. 53

45) वही '' '' '', दो. 56

46) 'उग आई फिर दूब' (दोहा संग्रह), अनंतराम मिश्र 'अनन्त', दो. 507

47) तुजुक हजारा (दोहा संग्रह), विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक', दो. 232

48) वही '' '' '', दो. 289

49) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), दोहाकार : सुरेश कुमार शुक्ल, दो. 85

50) वही '' '' '', रामानुज त्रिपाठी, दो. 63

51) वही '' '' '', श्री कृष्ण शर्मा, दो. 27

52) वही '' '' '', ओम वर्मा, दो. 58

53) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन), दोहाकार : पाल भसीन, दो. 19

54) वही '' '' '', दो. 54

55) वही '' '' '', कुमार रवीन्द्र, दो.41

56) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), दोहाकार : माहेश्वर तिवारी, दो.12
57) वही '' '' '', आचार्य भगवत दुबे, दो.37
58) वही '' '' '', श्री कृष्ण शर्मा, दो. 66
59) वही '' '' '', दो. 69
60) वही '' '' '', माहेश्वर तिवारी, दो. 42
61) वही '' '' '', वेद प्रकाश पाण्डेय, दो. 45
62) 'हम जंगल के फूल' (दोहा सतसई), ब्रज किशोर वर्मा 'शैदी', दो. 19
63) वही '' '' '', दो. 289
64) प्रगतिशील कविता में सौंदर्य चिंतन, डॉ. तनुजा तिवारी, पृष्ठ 55
65) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), दोहाकार : श्री कृष्ण शर्मा, दो.31
66) वही '' '' '', दो. 48
67) नावक के तीर (दोहा संग्रह), अनंतराम मिश्र 'अनन्त', दो. 382
68) वही '' '' '', दो. 322
69) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), अशोक अंजुम, दो. 83
70) कोने खुली किताब (दोहा सतसई), शैल रस्तोगी, दो. 106
71) वही '' '' '', दो. 193
72) वही '' '' '', दो. 260
73) 'जैसे' (दोहा सतसई), हरेराम 'समीप', दो. 128
74) तुज़ुक हज़ारा (दोहा संग्रह), विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक', दो. 706
75) वही '' '' '', दो. 08
76) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), दोहाकार : ध्रुवेन्द्र भदौरिया, दो.59
77) वही '' '' '', दो. 61
78) युवको! सोचो! (दोहा संग्रह), महेश 'दिवाकर', पृष्ठ 8
79) सप्तपदी-5, दोहाकार : माहेश्वर तिवारी, दो. 46
80) वही '' '' '', दो. 50
81) 'जैसे' (दोहा संग्रह), हरे राम समीप, दो. 61
82) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), सं. देवेन्द्र शर्मा 'इन्द्र', दोहाकार : भगवत दुबे, दो. 10
83) वही '' '' '', कैलाश गौतम, दो. 49
84) वही '' '' '', उर्मिलेश, दो. 27

85) 'जैसे' (दोहा संग्रह), हरेराम 'समीप', दो. 128

86) वही '' '' '', दो. 62

87) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन), कुमार रवीन्द्र, दो. 84

88) 'जैसे' (दोहा संग्रह), हरेराम 'समीप', दो. 427

89) वही '' '' '', दो. 457

90) 'सारांश' (दोहा संग्रह), रामेश्वर 'हरिद', पृष्ठ 25

91) केशवदास का प्रचलित दोहा

92) दोहा सतसई, बिहारी दास

93) दोहा दशक-5, (दोहा संकलन), कृष्णेश्वर डींगर, दो.30

94) कोने खुली किताब (दोहा सतसई), शैल रस्तोगी, दो.359

95) नावक के तीर (दोहा संग्रह), अनंतराम मिश्र 'अनन्त', दो. 178

96) वही '' '' '', दो. 285

97) बोलो मेरे राम (दोहा संग्रह), रामनिवास 'मानव', दो. 281

98) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन), विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक', दो. 79

99) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), दोहाकार उर्मिलेश, दो. 22

100) वही '' '' '', दो. 72

101) सप्तपदी-1 (दोहा संकलन), कुमार रवीन्द्र, दो.1

102) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), रामानुज त्रिपाठी, दो. 62

103) तिराहे पर खडा दरख्त (दोहा संग्रह), ब्रज किशोर वर्मा 'शैदी', दो. 40

104) दोहा दशक-2 (दोहा संकलन), अशोक 'अंजुम', दो.71

105) वही '' '' '', ध्रुवेन्द्र भदौरिया, दो. 61

106) सप्तपदी-5 (दोहा संकलन), श्रीकृष्ण शर्मा, दो. 51

107) वही '' '' '', दो. 75

108) वही '' '' '', वेद प्रकाश पाण्डेय, दो. 24

109) बटुक की कटुक सतसई, विश्व प्रकाश दीक्षित 'बटुक', दो. 89

110) 'हम जंगल के फूल', ब्रज किशोर वर्मा 'शैदी', दो. 187

111) वही '' '' '', दो. 270